टंकारा समाचार

(श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट का मासिक पत्र)

नवम्बर 2023 वर्ष 27, अंक 11 ❑ दूरभाष (दिल्ली): 23360059, 23362110 (टंकारा): 02822-287756 ❑ विक्रमी सम्वत् 2080 ❑ कुल पृष्ठ 16
ई-मेल: tankarasamachar@gmail.com ❑ एक प्रति का मूल्य 20/-रुपये ❑ वार्षिक शुल्क 200 रुपये ❑ आजीवन 1000/-रूपये

आओ दीप जलाएँ

❑ डॉ. शिवदत्त पाण्डेय

इस समय सम्पूर्ण भारतवर्ष ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व में दीपावली की तैयारियाँ हो रही हैं। जनमानस दीप पर्व को मनाने में सोल्लास रत हैं। ऐसे समय में इस पर्व को मनाने के कारणों, लाभों व हानियों पर विचार करना मनुष्य होने के नाते आवश्यक प्रतीत होता है। क्योंकि मनुष्य का मतलब है **'मत्वा कर्माणि सीव्यति'** अर्थात् जो विचार करके कर्मों को करता है। आइए विचार करें कि हमें दीपावली क्यों मनानी चाहिए? इसका लाभ क्या है तथा इसके साथ क्या-क्या भावनाएँ जुड़ी हुई हैं?

किंवदन्ती है कि विजयदशमी को रावण पर विजय करने के उपरान्त जब श्री राम देवी सीता और भ्राता लक्ष्मण के साथ अयोध्या वापस आये थे तो उनके स्वागत में अयोध्यावासियों ने घर-घर में दीप जलाये थे। तभी से हम दीपावली मनाने लगे हैं। वस्तुतः इतिहास के आलोक में जब हम इस किंवदन्ती की परीक्षा करते हैं तो यह घटना तर्क के आधार पर सत्य सिद्ध नहीं होती है।

वैदिक संस्कृति के प्राणतत्व हैं कृषि, ऋषि और यज्ञ। हम ऋषि परम्परा का अवलम्बन करते हुए यज्ञ की सिद्धि के लिए कृषि करते हैं और हमारा मूलमन्त्र है **'तमसो मा ज्योतिर्गमय'** अर्थात् हे प्रभो! हमें अन्धकार से निकाल कर प्रकाश की ओर ले चलो। तो प्रकाश की प्राप्ति के लिए दीप जलाना तो परमावश्यक है। जीवन ज्योति को आदीप्त करने के लिए प्रकाश को लाना आवश्यक है। जबसे सृष्टि बनी है तब से मनुष्य अन्धकार से युद्ध कर रहा है और इस पर सर्वांश में विजय पाने के लिए सामूहिक रूप से दीप जलाना आवश्यक है। घर-घर दीप जलाना अनिवार्य है। इसीलिए दीप जलाने को पर्व घोषित कर दिया गया है। 'पर्व' का मतलब है **''पृणाति पिपर्त्ति पालयति पूरयति प्रीणाति च जगदिति पर्व''**। अर्थात् जो पालन करता है, पूर्ण करता है और तृप्ति करता है उसे पर्व कहते हैं और तृप्ति होती है भूमा से, प्रचुरता से, आधिक्य से। इसीलिए दीप एक पर्व है जब इसे सब जलाते हैं और जो इसे ठीक-ठीक जलाते हैं श्रद्धाभाव से ज्ञानपूर्वक जलाते हैं उनके जीवन में पर्व-ही-होता है।

हम कृषि करते हैं, उससे हमें जो उपलब्ध होता है उसे प्रभु कृपा मानते हैं और उसका अकेले सेवन करना पाप समझते हैं। हम चाहते हैं कि हमारा जो कुछ हो वह समाज के लिए हो राष्ट्र के लिए हो। तन समर्पित, मन समर्पित और यह जीवन समर्पित। सब कुछ **'इदं राष्ट्राय इदन्न मम्'**। तो जब आश्विन मास में फसल पककर किसान के घर आती है तो वह प्रसन्न, सन्तुष्ट और तृप्त होता था और अकेला न खाये इसलिए सर्वप्रथम यज्ञदेव को समर्पित करता था, सबके लिए देने का प्रयत्न करता अतः वैदिक परम्परा में यही **'नवसस्येष्टि'** नये अन्न की इष्टि अर्थात् यज्ञ ही दीपपर्व था। अमावस्या के दिन सब 'नव' अन्न से यज्ञ करते थे घर-घर दीप जलाते थे यहीं से अर्थात् जब धरती पर और कोई संस्कृति नहीं थी, कोई सभ्यता नहीं थी, वैदिक संस्कृति और सभ्यता ही थी तब से हम दीपपर्व मनाते चले आये हैं। राम खुद उस संस्कृति में पले, बढ़े और उसके पोषक थे। यह पर्व तो आदिपर्व है, जिसे राम के पूर्वज भी मानते थे।

इस पर्व का नाम **'नवसस्येष्टि'** है अतः यह सिद्ध है कि जब से धरती पर मानवीय संस्कृति है तब से यह पर्व भी है। वैदिक संस्कृति चिरकाल से अजर-अमर है तो इसका कारण ये पर्व ही हैं। जिस वस्तु, जीवन, संस्कृति या सभ्यता में पर्व नहीं होते वह अक्षुण्ण चिरकाल तक जीवित नहीं रह सकती। क्योंकि पर्व शब्द का अर्थ ही है पूर्ति। संस्कृत साहित्य में पर्व शब्द ग्रन्थि=गाँठ के पर्यायवाची के रूप में प्रसिद्ध है। संसार में सब ओर दृष्टिगोचर होता है कि जहाँ-जहाँ पर्व हैं, गाँठ है वहीं-वहीं वृद्धि है। जिसमें

(शेष पृष्ठ 7 पर)

दीपावली की शुभकामनाएं

'टंकारा समाचार' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

जग बौरा भया, पाथर पूजै जाय

- पदम्श्री डॉ. पूनम सूरी

प्रधान, डी.ए.वी. कॉलेज प्रबन्धकर्त्री समिति एवम् आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, ट्रस्ट प्रधान महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा (जन्मभूमि)

चाणक्य ने कहा है, परमेश्वर न तो काठ में है, न पत्थर में और न मिट्टी के पदार्थों में ही है। वह तो हमारे भावों में है। इसलिए जहां भाव है, वहीं वह है। प्राय: ईश्वर को हम मन्दिर, मस्जिद, गिरजा घर और गुरुद्वारों में खोजते हैं। उसे हम जंगलों, गुफाओं और पहाड़ों में खोजते हैं। पर वह ढूंढे नहीं मिलता।

कारण? यह है कि उसका असली मन्दिर तो और कहीं है। ईश्वर का असली मन्दिर-मनुष्य का अपना हृदय स्थल है। यह मन्दिर स्वयं भगवान का अपना बनाया हुआ है। गीता में भगवान कृष्ण ने कहा है मैं सब भूतों, प्राणियों के हृदय में स्थित आत्मा हूं। महर्षि अरविंद भी यही समझाते थे कि ईश्वर कहीं और नहीं बल्कि समस्त प्राणियों के हृदयों में आत्मा के रूप में निवास करता है। प्रभु की कोई मूर्ति नहीं है। वह अन्तर्यामी और अमूर्त है। वह अनादि, अनंत और आकार रहित है। उसकी कोई प्रतिमा नहीं है। वेदों में प्रतिमा की पूजा का कोई विधान नहीं हैं, अत: मूर्ति पूजा वेद सम्मत नहीं है। ईश्वर प्राणियों में व्याप्त होकर उन्हें अस्तित्व और गति देता है। ज्ञान, कर्म और भक्ति के द्वारा, उससे तादाम्य स्थापित कर के प्राणी पूर्णता को प्राप्त करता है। परमेश्वर ने, प्राणी को सब कुछ दिया है उसके लिए सूरज, चांद, सितारे, रोशन किए हैं, फिर भी हम दीये से उसकी आरती उतारते हैं। उसने ही तो असंख्य सुगंधित सुमन खिलाए हैं। फिर भी हम फूल चढ़ा कर और अगरबत्ती की खुशबू से उसे खुश करना चाहते हैं। उस ईश्वर ने ही तो अगणित रस भरे फलों का उपहार दिया है, फिर भी हम एक-दो फल देकर रिझाना चाहते हैं उसे। उसी की वस्तु का उसी को उपहार।

ईश्वर ऐसा कोई उपक्रम उपकार या उपहार नहीं चाहता। वह केवल निश्छल प्रेम चाहता है। शेष सब पुजारी चाहता है। वह उसकी प्रतिमा मन्दिर में रख देता है और प्रचार करता है कि मूर्ति के दर्शन से ही वांछित फल मिलेगा। अगर वह मूर्ति ही सारी कामनाएं पूरी कर देती तो काम करने की जहमत उठाने की जरूरत क्या थी?

बहुत से लोग मूर्तियों के सामने साष्टांग गिर कर गिड़गिड़ाते हैं और चाहते हैं कि उनके सारे कष्ट दूर हो जाएं। किन्तु क्या ऐसा होता है? कुकर्म करते समय तो हम सोचते नहीं और फिर चाहते हैं कि मूर्ति ही हमें सजा से बचा दे। पर अन्तर्यामी तो सब जानता है, वह सब के भले-बुरे कर्मों का द्रष्टा है। कुकर्म तो बड़ी बात है, वह तो कुचेष्टा को भी भांप लेता है। वह सिफारिश नहीं सुनता और रिश्वत भी नहीं लेता।

आप ने देखा होगा, बहुत से लोग मन्दिर बनवाने या मूर्तियां खरीदने के नाम पर चंदा करते हैं। चंदा देने वाले नहीं जानते कि उनके पैसे का क्या किया जाएगा? मन्दिर या मूर्ति से किसे लाभ होगा? पुजारी को या उनके भोले-भाले भक्तों को, जो धर्म के नाम पर धन देते हैं तथा बाद में यह भी नहीं जान पाते कि उनकी खून पीसीने की कमाई की क्या गति हुई? इसीलिए देश के अनेक छोटे-बड़े धर्म स्थलों में अपार धन जमा है।

प्रतिमाओं का मान कर वे माननीयों को अपमान किया जाता है। माता, पिता, आचार्य, अतिथि और जीवन-साथी-ये पांच मूर्तिमान देव हैं। सेवा और सत्कार से, उनको संतुष्ट रखना ही सच्चिदानंद की स्तुति है। इन मूर्त प्राणियों की सेवा से ही मनोकामनाएं पूर्ण हो सकती है।

दीनों, दरिद्रों, रोगियों, बुजुर्गों और परित्यक्तों की परिचर्या ही पवित्र पूजा कर्म है। मन्दिरों का उपयोग शालाओं, चिकित्सालयों या निराश्रितों के आश्रयस्थलों के रूप में करने पर विचार करना चाहिए। प्रतिमा को पूज कर पार होने का सपना देखना तो पत्थर पर दूब जमाने की कोशिश है। इसीलिए कबीर ने कहा कबीरा जग बौरा भया....पाथर पूजै जाय/ घर की चाकी ना पूजै, जाका पीसा खाय।

–पद्मश्री डॉ. पूनम सूरी जी के साथ अनऔचपारिक बैठक में चर्चा के कुछ अंश

पाठकों के लिए सूचना: टंकारा समाचार के पाठकों को सूचित किया जाता है कि वे फेसबुक पर टंकारा समाचार पेज के लिंक **www.facebook.com/tankarasamachar** पर जाकर समाचार पढ़ सकते हैं अथवा प्रिन्ट निकाल सकते हैं।

आवश्यक सूचना

टंकारा समाचार इंटरनेट एवम् वट्सअप पर उपलब्ध। सभी सदस्य पाठकों से अनुरोध है कि अपना ई-मेल पता एवम् वट्सअप मोबाइल नम्बर **9560688950** पर **सदस्य संख्या एवम् नाम सहित** भेजे ताकि हम पंजीकृत कर सके जिससे कि आपको उपरोक्त माध्यम से जोड़ा जा सके।

नई पीढ़ी से अपेक्षायें

आज का वातावरण देखकर और नवयुवकों की चाहत देखकर मेरे मन में एक टीस सी उठती है। मेरे हृदय की गहराइयों में वेदना की एक लहर सी दौड़ने लगती है। क्या हुआ इस पावन भूमि पर रहने वाली ऋषियों की सन्तान को, जो अपनी प्राचीन संस्कृति एवं संस्कारों को भूलकर, पश्चिमी सभ्यता की होड़ में एक ऐसी राह पर चल पड़ी है जिसका न ओर है, न छोर है। जो इन्हें मानसिक रूप में तनाव, स्वास्थ्य के नाम पर एक औषधीय जीवन, अध्यात्म के नाम पर एक छलावा देने के अतिरिक्त कुछ नहीं दे सकती।

इनका जीवन मशीनवत् होता जा रहा है। प्रात: से देर रात्रि तक यन्त्रवत् कार्य करना, एक मानसिक तनाव लिये घर लौटना, रात्रि को जागना, दिन में देर तक सोना। मनुष्य एक चलता फिरता कम्प्यूटर ही बन गया है जिसका अपना कोई अस्तित्व नहीं। अपने नन्हे-मुन्ने मासूम बच्चों को एक वेतन याफ्ता स्त्री के अधीन छोड़ना, पढ़ाई के नाम पर ट्यूशन का आश्रय, यहां तक कि भोजन कब मिलेगा, यह भी दूसरे पर निर्भर हो गया है। माता-पिता के देर से आने पर बच्चों का घर से बाहर रहकर उच्छृंखल होना, ये सब किसलिए? केवल धन के लिए। ये समस्त प्रश्न मेरे हृदय को कचोटते रहते हैं। केवल रूपया पैसा ही आधार बन गया है हमारे लाडलों के जीवन का। यह भी एक मान्य सत्य है कि धन के बिना दुनिया में कोई भी व्यवहार ठीक ढंग से नहीं हो सकता परन्तु रूपया पैसा ही सब कुछ नहीं है। धन कमाने के लिए आज रिश्ते नाते, प्रेम प्यार, आपसी सम्बन्ध सब दांव पर लग गए हैं। स्वार्थ की भावना प्रबल होती जा रही है। संयुक्त परिवार, एकल परिवार का रूप ले रहे हैं। वृद्ध लोगों का वृद्धाश्रमों में रहना तो साधारण सी बात हो गया है। बड़ो के प्रति सम्मान की भावना तो जैसे समाप्त ही होती जा रही है। भाई-भाई से दूर होते जा रहे हैं, इसी धन सम्पत्ति के कारण? परस्पर प्रेम भाव के सम्बन्ध भी धन के तराजू पर तोले जाते हैं। आखिर यह सब कहां तक होगा। इसकी कोई इतिश्री है या नहीं? इन सब परेशानियों से दूर होने के लिए एक ही समाधान है-अध्यात्म का रास्ता। परन्तु आज की पीढ़ी यह रास्ता तो जैसे भूल ही चुकी है। ईश्वर के नाम पर तो उनके पास समयाभाव ही है। फिल्मों, क्लबों, मॉल में घूमने का समय तो है परन्तु जो परमात्मा उन्हें यह सब कार्य करने की शक्ति दे रहा है, उसके लिए दो पल का समय नहीं।

अरे! थोड़ा ध्यान उस प्रभु में तो लगा के देख, तेरे सारे तनाव दूर हो जायेंगे। अगर समय रहते अपने जीवन की बागडोर न सम्भाली तो हमारी आनेवाली पीढ़ी हमें ही इसके लिए उत्तरदायी ठहराएगी। हम क्या करेंगे, उस धन सम्पत्ति का जो केवल धन जोड़ने की भावना से कमाई गई हो। जिसमें प्रेम, प्यार, भावना का आधार नहीं, केवल स्वार्थ ही स्वार्थ छिपा है। हमें इस ओर मनन करना होगा। हमें ईश्वर के बनाए 24 घण्टों के दिन में से 24 मिनट तो निकालने ही चाहिए, उस प्रभु का धन्यवाद करने के लिए। यह कोई असम्भव कार्य नहीं है। हम अपने दैनिक जीवन में देखें तो कोई भी व्यक्ति हमारे किसी कार्य करने में सहायता करता है तो झट से हमारे मुंह से निकल पड़ता है 'Thank You' हमारा रूमाल नीचे गिर गया अथवा अन्य कोई सामान सड़क पर गिर जाता है और कोई उसे उठाने में हमारा साथ देता है तो आप क्या कहते हैं उसे -'धन्यवाद', क्यों? अरे यह तो एक छोटा सा ही उदाहरण है। ऐसे सैकड़ों कार्य करने में प्रभु हमारी सहायता करते हैं, हमें शक्ति देते हैं फिर उनके लिए आभार क्यों नहीं प्रकट करते? चाहे वह हमें प्रत्यक्ष रूप से दिखता नहीं है लेकिन वह अन्तर्यामी प्रतिक्षण हमारी प्रतिछाया की तरह हमारे साथ रहता है। पग-पग पर हमारे साथ चलता है। जहां आप हो वहां पर आपकी छाया भी है अत: इस ओर थोड़ा ध्यान देने की आवश्यकता है।

धन कमाइए, खूब कमाइए परन्तु अपनी बदलती हुई सोच के साथ। सच्चे अर्थों में वही अर्जित धन सार्थक है जिसमें दूसरों का सुख छिपा हो, दूसरों का आशीर्वाद प्राप्त हो, न कि दूसरों की हाय। अपने परिवार, अपनी सन्तान, सामाजिक भावना को ताक पर रखकर धन कमाया तो क्या कमाया? उससे केवल धन समृद्धि तो मिल सकती है, सुख समृद्धि नहीं। अब आपके हाथों मे है इसका निर्णय करना कि आपको क्या चाहिए-केवल धन या सुख शान्ति? समय रहते हमें चेतना पड़ेगा। नहीं तो जो संस्कृति, जो सभ्यता हमारे पूर्वज हमें धरोहर के रूप में दे गए हैं, उन सब से हाथ धोना पड़ेगा। हमें अपनी सन्तान को अपनी संस्कृति का विधिवत् ज्ञान करवाना, उसका स्वयं भी पालन करना होगा, अपनी सभ्यता के रंग में रंगने की दिशा दिखानी होगी, अगर हम चाहते हैं कि हमारे बच्चे मानसिक तनाव, आधिव्याधियों से मुक्त रहें तो हमें स्वयं को भी अध्यात्म की ओर जागृत करना होगा तभी वे भी इसे महत्त्व देने लगेंगे। अगर आपको तनावमुक्त रहना है तो भगवान् के नाम का खजाना भी भरो। उसके प्रति समर्पण का बैंक बैलेंस एकत्रित करो। भगवान् का नाम सार्थकता देता है इसीलिए उसी को जीवन का आधार बनाओ। कहाँ खो गई है तुम्हारी शान्ति, कहाँ खो गया है तुम्हारा आनन्द। जो उल्लास, जो खुशी, जो हंसी के फव्वारे बचपन में तुम्हारी दौलत थी, युवावस्था आते ही वह कहां लुप्त हो गई?

यह तो सर्वविदित है कि ऐन्द्रिक लालसाओं ने हमें जकड़ रखा है। आंखे कहती हैं रूप देख ले, कान अपनी प्रशंसा सुनना चाहते हैं, शरीर कहता है जरा प्यार का स्पर्श कर ले। जिह्वा कहती है मीठा खट्टा चख ले परन्तु इनकी पूर्ति में भी आनन्द नहीं मिलता, अन्त में केवल विषाद ही मिलता है क्योंकि यह हमारी इच्छाएं ही हैं जो कि दूसरे को देखकर, हम प्रतिस्पर्धा की भावना से भरकर क्रोध और ईर्ष्या के चंगुल में फंसने लगते हैं। फिर जीवन तनावपूर्ण हो जाता है।

आज की युवा पीढ़ी की सोच सर्वथा न्यायसंगत नही है कि हवन यज्ञ करना, सत्संग कीर्तन में जाना तो केवल वृद्धावस्था आने पर ही किया जाता है। अभी तो हमारा इनसे क्या लेना-देना? उन्हें युवावस्था से ही थोड़ा-थोड़ा अभ्यास करना पड़ेगा।

अत: युवावस्था से ही धन अर्जन करने के साथ-साथ उस परम शक्ति का भी सुमिरन करना आरम्भ कर दो जो तुम्हें यह सब कार्य करने की क्षमता देने वाला है। फिर देखो जीवन कितना सुन्दर और सन्तुलित बन जाता है। प्रभु आपको सत्प्रेरणा दें।

अजय टंकारावाला

टंकारा ट्रस्ट द्वारा चलाई जा रही गतिविधियों के लिए आप निम्न प्रकार से सहयोग कर सकते हैं

परिवार के एक बालक को गुरुकुल में पढ़ाएं अथवा गुरुकुल के
एक ब्रह्मचारी का वार्षिक व्यय 20,000/- रुपये देवें

❑❑❑

गौ-दान : महा-दान–उपदेशक विद्यालय के ब्रह्मचारियों की पर्याप्त मात्रा में दूध की व्यवस्था हेतु एक गऊदान
करें अथवा 75,000/- रुपये की सहयोग राशि गऊ हेतु देवें।
(तीन व्यक्ति मिलकर भी 25,000/- प्रति व्यक्ति भी दे सकते है।)

❑❑❑

गऊ पालन एवं पोषण हेतु 12,000/- रुपये का हरा चारा एवं
पौष्टिक आहार की व्यवस्था (एक गऊ का वार्षिक व्यय)

❑❑❑

1000/- रुपये की सहयोग राशि देकर स्वामी दयानन्द सरस्वती जन्मभूमि के सहयोगी सदस्य बनें। यह राशि
आपको प्रतिवर्ष देनी होगी। इसलिए अपना पूरा पता अवश्य लिखवायें।
जो दान देवें उसके अतिरिक्त यह 1000/- रूपये राशि अवश्य देवें।

❑❑❑

श्री ओंकारनाथ महिला सिलाई-कढ़ाई केन्द्र की बेटियों द्वारा बनाए गए
सामान को क्रय करके सहयोग कर सकते हैं।

❑❑❑

ब्रह्मचारियों के एक सत्र का भोजन 20,000/- रुपये की सहयोग राशि देकर।

❑❑❑

ऋषि बोधोत्सव पर 1,50,000/- रुपये की सहयोग राशि देकर एक सत्र के भोजन में सहयोग

❑❑❑

20,000/- रुपये की सहयोग राशि प्रति वर्ष किसी एक दिन का (जन्मदिवस अथवा
स्मृति दिवस) ब्रह्मचारियों का भोजन देकर सहयोग कर सकते है।

❑❑❑

ब्रह्मचारियों के पहनने हेतु सफेद कपड़ा एवं दैनिक प्रयोग में आने वाली वस्तुएं देकर

टंकारा ट्रस्ट को दी जाने वाली राशि आयकर की धारा 80 G के अन्तर्गत मान्य है। एवम् C.S.R. दान प्राप्त करने हेतु पंजीकृत।

यह दान नकद/चैक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर द्वारा **''श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा''** के नाम दिल्ली कार्यालय आर्य समाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 अथवा श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा जिला–मौरबी–363650 (गुजरात) के पते पर भिजवाकर पुण्यार्जन करें। आप सहयोग राशि **खाता न. 4665000100001067, पंजाब नैशनल बैंक, IFSC CODE PUNB0015300** में जमा करा सकते हैं। जमा की गई सहयोग राशि, तिथि एवम् पते की सूचना मो. 09560688950 पर देवें।

–:निवेदक:–

योगेश मुंजाल
कार्यकारी प्रधान

अजय सहगल
मन्त्री (मो. 9810035658)

उपकार्यालय: आर्य समाज अनारकली मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 सम्पर्क: 09560688950 (व्यवस्थापक)

वेद आग्रही स्वामी दयानन्द सरस्वती

❒ स्व. प्रो. उमाकान्त उपाध्याय

स्वामी दयानन्द का जन्म फाल्गुनी कृष्णा दशमी सं 1881 वि. सन 1824 ई. को सौराष्ट्र (गुजरात) टंकारा, मौरवी में हुआ था। इनके पिताजी सामवेदी ब्राह्मण थे। वे निष्ठावान शिव भगवान् के भक्त थे। उन्होंने अपने पुत्र का नाम "मूलशंकर" रखा था। मूलशंकर को यजुर्वेद की रूद्राष्टाध्यायी कंठस्थ करा दी थी। कर्षण जी अपने पुत्र मूलशंकर को 14 वर्ष की आयु में पूर्ण श्रद्धा भक्ति के साथ शिवरात्रि का व्रत रखवाया। रात्रि जागरण का विशेष फलदायक महत्व है। निद्रा देवी ने सबको दबा लिया। सिर्फ मूलशंकर पूरी श्रद्धा भक्ति से जागते रहे। इतने में दो-चार चूहे पिंडी पर अर्पित सामग्री को खाने लगे। मूलशंकर के हृदय में प्रभु-कृपा से सत्य का प्रकाश हुआ। उन्हें दृढ़ विश्वास हो गया कि यह पिण्डी भगवान् शंकर नहीं हो सकती। सत्य के प्रति आग्रही मूलशंकर घर आ गये। सत्य के प्रति यह परम दुर्दान्त आग्रह स्वामी दयानन्द से संपूर्ण जीवन में बड़ी दृढ़ता से बना रहा।

स्वामी दयानन्द ने अपने युगान्तरकारी कालयजी ग्रन्थ "सत्यार्थ प्रकाश" की भूमिका में लिखा है "मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जाननेहारा है, तथापि प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य पर झुका जाता है" स्वामीजी ने वहीं भूमिका में पुन: लिखा है- "विद्वान् आप्तों का यही मुख्य काम है कि उपदेश वा लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरूप समर्पित कर देना, पश्चात् मनुष्य लोग स्वयं अपना हिताहित समझकर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनंद में रहें, "वहीं पुन: लिखते हैं- "यद्यपि आजकल बहुत से विद्वान् प्रत्येक मतों में हैं, वे पक्षपात छोड़कर सर्वतंत्र सिद्धांत अर्थात् जो-जो बातें सबके अनुकूल सब में सत्य हैं, उनका ग्रहण और जो एक-दूसरे के विरूद्ध बातें हैं, उनका त्याग परस्पर प्रीति से वर्तें वर्तावें तो जगत का पूर्ण हित होवे। क्योंकि विद्वानों के विरोध से अविद्वानों में विरोध बढ़कर अनेकाविधि दु:ख की वृद्धि और सुख की हानि होती है" यह उद्धरण किसी समीक्षा या व्याख्या की आकांक्षा नहीं करते।

स्वामी दयानन्द सत्य के प्रति इतने अग्रहवान थे कि उन्होंने आर्य समाज का चौथा नियम यह बनाया कि "सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।" स्वामी जी ने पुन: पांचवे नियम में यह व्यवस्था दी है कि "सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।"

सत्य और न्याय एक-दूसरे के साथी हैं, जहाँ सत्य का पालन होगा वहां न्याय स्वत: होता रहेगा। जिस युग में स्वामीजी ने अपना प्रचार कार्य आरम्भ किया उस समय कई प्रकार के अन्याय समाज में परिवारों में प्रचलित हो गए थे। सामाजिक रूप में छुआ-छूत भयानक रूप से चल रहा था। परिवारों में स्त्रियों की स्थिति बहुत दयनीय हो गयी थी। उनके साथ प्राय: दासियों जैसा व्यवहार होता था। स्त्री और शूद्रों को पढ़ने का अधिकार नहीं था। स्वामी दयानन्द ने बड़े क्षोभ और उग्रता से इस अन्याय का विरोध किया। लड़कियों के लिए पाठशाला की व्यवस्था की और अछूतों के लिए छुआ-छूत के भेद भाव दूर कर दिए और उनके लिए भी पढ़ने की व्यवस्था की।

उस युग में बाल-विवाह बहुत प्रचलित था। आठ-दस वर्ष की लड़कियां भी बूढ़ों और अधेड़ों को ब्याह दी जाती थीं। विधवाओं की संख्या बहुत अधिक थी और विधवा-विवाह धर्म-विरूद्ध माना जाता था। ये बाल-विधवाएं या तो वेश्या बन जाती थीं या देवदासियां बन जाती थीं। स्वामी दयानन्द ने इन सभी अन्यायों का डटकर विरोध किया। आर्य समाज ने अपने मंदिरों से छुआ-छूत को हटाया और बाल-विवाह के विरूद्ध सामाजिक आन्दोलन किया। हिन्दू समाज में विधवा विवाह आरम्भ हो गया। प्रत्येक आर्य समाज के विद्यालयों और छात्रावासों में बिना किसी रोक-टोक के खुल गयीं। अछूतों को आर्य समाज के कार्यकर्ताओं को सामाजिक बहिष्कार का दण्ड भी भोगना पड़ा किन्तु स्वामी दयानन्द की शिक्षाओं के फलस्वरूप ये सामाजिक आन्दोलन बढ़ता ही गया और छुआ-छूत मिटने लगा तथा स्त्रियों को भी पुरूषों की तरह सामाजिक अधिकार मिलने लगे। उन्हें सब प्रकार से उन्नति का अवसर सुलभ हो गया।

संस्कृत और हिंदी की शिक्षा की बड़ी उपेक्षा हो रही थी। संपन्न लोग उर्दू और फारसी पढ़ रहे थे। स्वामी दयानन्द ने अपने संगठन में सारे कामों की हिंदी में करने का अनिवार्य नियम बना दिया।

स्वामी दयानन्द के इस प्रचार का परिणाम यह हुआ कि अछूत कुलों के विद्यार्थी भी बड़े-बड़े विद्वान, आचार्य, वेदपाठी, अध्यापक बनाने लगे और बिना किसी भेद-भाव के पण्डितों की मण्डली में प्रतिष्ठित होने लगे। स्त्रियाँ भी संस्कृत और वेद की उच्चकोटि की विदुषी बनने लगीं वर्तमान में राजनीतिक दलों ने अपने निहित राजनीतिक स्वार्थों के कारण स्वामी जी की छुआ छूत जातिवाद को समाप्त करने की भावना को खत्म करने को खूब बढ़ावा दिया। अब तो ऐसा लगने लगा है कि अछूत जनजाति, अनुसूचित जाति, पिछड़ा वर्ग, सभी को राष्ट्र की एकता के विभाजन का राष्ट्रघाती पुरस्कार मिलने लगा है और स्वार्थी राजनीति इन्हें चिरस्थायी करने पर तुली हुई है, स्वामी दयानन्द और महात्मा गांधी की तरह राष्ट्र-हितैषी छुआ-छूत को दूर करने की नीति को ही राजनीति ने निर्ममता से समाप्त कर दिया है।

वेदों को अपनाने का सिद्धांत: स्वामी दयानन्द का सुविचारित निश्चय था कि जब तक भारतवर्ष ने वेदों की शिक्षा को अपने राष्ट्रीय जीवन में अपना रखा था, तब तक देश की सर्वांगीण उन्नति हुई और देश संसार के सभी देशों का शिरोमणि बना रहा, स्वामी जी ने आर्य समाज का तीसरा नियम ही बना दिया- "वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।" वेदों को अपनाने के अनेकों कारण थे। वेद पुरूषार्थ और कर्मण्यता का उपदेश देते हैं, भाग्य, नियति का विरोध करते हैं- **"कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजिविषेत्"**- यावत् जीवन कर्म करते हुये जीने की इच्छा करो। परमेश्वर ने मानवयोनि को उन्नति करने तथा दक्षता प्राप्त करने के लिए बनाया है- **"उद्यानम् ते नावयानं, जीवातुं ते दक्षतातुं कृणोमि"**- वेद कर्म न करने वालों को, कामचोर, दस्यु कहता है, ऐसे परजीवियों, पैरासाइटों को दण्ड देने का आदेश देता है- **"अकर्मा दस्यु: बधी: दस्युं"**। परमेश्वर ने मनुष्य को उचित, अनुचित परखने की शक्ति दी है वेद कहते हैं- **''अश्रधां अनृते दधात्, श्रद्धां सत्ये प्रजापति:"**। वेदों में पाप क्षमा का सिद्धांत नहीं है, पाप या पुण्य, सबका फल मनुष्य को भोगना पड़ता है-

"अवश्यमेव भोक्तव्यम् कृतं कर्म शुभाशुभं"। वेदों में सांसारिक और पारमार्थिक उन्नति का परिपूर्ण उपदेश हुआ है। वेद में कृषि, वाणिज्य, उद्योग, सबकी शिक्षा है। वेद में सब विद्याओं का मूल पाया जाता है। वेदों में पृथ्वी से लेकर अंतरिक्ष और द्युलोक पर्यन्त सब ज्ञान का परिपूर्ण वर्णन है। वेद में स्वराज्य की बड़ी महिमा है। अनेक मन्त्रों में **"अर्चन्ननु स्वराज्यम्"** का सम्पुट हुआ है। वेद में प्रखर राष्ट्रवाद की महिमा का वर्णन है। प्रार्थना है कि हमारे राष्ट्र में सब प्रकार के विद्वान, योद्धा, विदुषी स्त्रियाँ और बलवान गाय, घोड़े, पशु आदि हों। वेद में मातृभूमि की बड़ी उत्कृष्ट भावना विद्यमान है। अथर्ववेद के भूमिसूक्त में कहा गया है-**"माता भूमिः, पुत्रोऽहम् पृथिव्याः"।** मातृभूमि की यह प्राचीनतम प्रतिष्ठा है। वेद में विश्व-सरकार और विश्व-नागरिक का भी वर्णन है। वेद में विश्वनागरिक को "विश्वमानुष" कहा गया है। यह संयुक्त राष्ट्रसंघ से भी अधिक उत्कृष्ट व्यवस्था में पायी जाती है।

स्वामी दयानन्द ने अपने जीवन की परवाह न करते हुए भी सत्य, न्याय और वेद का प्रचार किया। मानव जाति के कल्याण में ही उन्होंने अपना जीवन समाप्त कर दिया। सत्य की रक्षा के लिए ही उन्हें धोखे से विषपान कराया गया और १८८३ ई. में दिवाली की संध्या को उनका देहांत हो गया। ऐसे महात्मा का पुण्य स्मरण भी सौभाग्य है।

पी-३०, कालिन्दी हाउसिंग स्कीम, कोलकाता- ७०००८९

❑ उस मनुष्य का जीवन सफल है जो दूसरों से अपने दोषों को सुनकर क्रोध नहीं करे। दोष बताने वाले का उपकार माने कि जिससे दोष सुनने वाला मनुष्य अपने दोषों को दूर करके पाप करने से बचे।

-स्वामी दयानन्द

❑ जो मनुष्य किसी की उन्नति की केवल इच्छा ही नहीं करते है किन्तु सभी के ऐश्वर्य को बढ़ाने की इच्छा करते हैं वे सूर्य के समान उपकार करने वाले होते है-धर्मात्मा होते हैं। अर्थात् सूर्य संसार को प्रकाश देता है बदले में कुछ लेता नहीं है।

-स्वामी दयानन्द

हे राम

❒ धर्मवीर सेठी

मोहनदास करमचन्द गाँधी 2 अक्टूबर को समूचा राष्ट्र बापू के अभिधान से अभिहित करता है। एक ऐसा व्यक्ति जो शारीरिक रूप से चाहें कृश-काय रहा हो परन्तु मनोबल की दृष्टि से उसकी सानी नहीं। तभी तो पोरबन्दर (गुजरात) में जन्मा वह व्यक्तित्व शरीर पर धोती, पाँव में साधारण जूती और हाथ में लाठी लिए हुए इतना तेज चलता था कि उनकी गति के साथ मुकाबला करना आसान नहीं था। उनके सत्याग्रह/अनशन की तीव्रधार के सम्मुख ब्रिटिश साम्राज्य भी नहीं टिक सका और अन्ततोगत्वा 15 अगस्त 1947 को लाल किले की प्राचीर से अपना तिरंगा लहरया गया। जहाँ बापू का मनोबल जवाँ था वहाँ उनकी लाठी की भी करामात थी कि उसके सहारे वह अत्यन्त तीव्र गति से चल भी सकते थे।

बापू ने राम राज्य की कल्पना की थी, अपने देश के अति-निर्धनों की खुशहाली चाहते थे परन्तु क्या पता था कि आज प्रत्येक भारत-वासी लम्बी सांस भरते हुए अनायास, परिस्थितियों को देखते हुए, कहने पर मजबूर हो जाता है कि 'हे राम! हम किधर को जा रहे हैं।' बापू ने अन्तिम सांस लेते हुए भी यही शब्द बोले थे 'हे राम'। राजघाट पर बनी उनकी समाधि पर आज भी यही अक्षर पत्थर में उकेरे हुए दिखाई पड़ते हैं। काश! भारत के कर्णधार अपने 'बापू' की किसी बात को तो मानते! वर्ष में दो बार उनकी समाधि पर पुष्पांजलि दे देना पर्याप्त नहीं है।

ऐसा ही एक अन्य व्यक्तित्व भी 2 अक्टूबर हमें स्मरण हो आता है जो (गुदड़ी का) लाल भी था और (दिल का) बहादुर भी। क्या हुआ वह भारत का प्रधानमन्त्री बना परन्तु उनके चरित्र में इस पद की बू तक नहीं थी। कैबिनेट का मन्त्री होने पर एक रेल दुर्घटना ने उनकी आत्मा को ऐसा कचोटा कि उन्होनें त्याग पत्र दे दिया। ऐसी मिसाल आज ढूँढे भी नहीं मिलती। शायद "नैतिकता" शब्द भारतीय राजनीति के शब्द कोष से ही निकाल दिया गया है। वाह रे मानव! बाहरी चकाचौंध में तू इतना सराबोर हो गया है कि आत्मा की आवाज तुम्हें सुनाई ही नहीं देती। 'जय जवान जय किसान' का नारा देने वाले भारत के ऐसे महान् सपूत 'भारत रत्न' की उपाधि से अलंकृत लाल बहादुर शास्त्री को भी हम सश्रद्धा नमन करते हैं।

बापू के राम की ओर तो थोड़ा ऊपर संकेत किया है; तो क्यों न संस्कृत भाषा में रचित वाल्मीकि की 'रामायण' की चर्चा की जाए। वाल्मीकि ने अपने महाकाव्य में राम के उदात्त चरित्र को जो चित्रण किया है वह देखते ही बनता है। उन्होंने राम के चरित्र के माध्यम से युवा वर्ग को राष्ट्र के उत्थान हेतु उनका अनुसरण करने की प्रेरणा दी है। इस वर्ग के लिए परिषद् भी अनेकों आयोजन करता है क्योंकि इसी वर्ग ने देश की बागडोर सम्भालनी है। ध्यान रहे 'रामायण' की रचना संस्कृत में हुई थी। राम के चारित्रिक गुणों से महाकवि मैथिली शरण गुप्त इतने प्रभावित हुए कि उन्हें कहना पड़ा:

राम तुम्हारा वृत्त स्वयं ही काव्य है। कोई कवि बन जाए सहज सम्भाव्य है।।

और विजयदशमी (दशहरा) का पर्व भी भारत भर हर्षोल्लास से मनाया गया। सन्देश या 'सत्य की असत्य पर और न्याय की अन्याय' पर विजय। खेद है कि राष्ट्र के कर्णधार राष्ट्रधर्म के स्थान पर भ्रष्टाचार धर्म निभाने में जी जाँ से लगे हुए हैं। बात यह है कि हम ने अपने आदर्श नायकों से (चाहे वे किसी भी क्षेत्र के क्यों न हों) कुछ भी नहीं सीखा। आज 'राम राज्य' की जगह 'रावण राज्य' की सी स्थिति दिखाई पड़ती है। कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं बचा जो भ्रष्टाचार से मुक्त हो। यहाँ तक कि प्राकृतिक आपदा में भी स्वार्थी अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं। इन गम्भीर परिस्थितियों को देखते हुए राष्ट्र को स्वामी दयानन्द जैसे पराक्रमी नायक की आवश्यकता है।

इस तिमिर में आशा की किरण ढूँढ़ने की भरपूर कोशिश कर रही है आज समाज अपने विभिन्न प्रकल्पों के माध्यम से। अन्त में इतना कहना ही पर्याप्त होगा: **न हो साथ कोई अकेले बढ़ो तुम, सफलता तुम्हारे चरण चूम लेगी।**

-ए-1055, सुशांत लोक-1, गुरुग्राम, हरियाणा-122009

ओ३म्
1824
2024
महर्षि दयानन्द सरस्वती जी
की
200वीं जयंती
पर दो वर्षीय विश्व व्यापी विशेष आयोजनों की श्रृंखला में
चलो टंकारा - चलो टंकारा
महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के जन्म स्थल पर
भव्य आयोजन
10 से 12 फरवरी 2024
महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट
टंकारा, राजकोट मोरबी हाईवे,
गुजरात

वेदां वालया ऋषिया तेरे आवन दी लोड़

❒ स्व. अरूणा सतीजा

यदा यदा हिधर्मस्य ग्लानिभर्वति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।

जब-जब धर्म की हानि होती है ईश्वर इस धरती पर जन्म ले कर धर्म की रक्षा करता है यह एक भ्रम है, असत्य है अविद्या है। ईश्वर का न जन्म होता है और न ही मृत्यु। वह अजर, अमर, नित्य, व सृष्टिकर्त्ता है। वह निराकार व निर्विकार है। जिस का जन्म होगा उस की मृत्यु भी होगी। मानो किसी देश में भगवान जन्म लेगा तो गर्भावस्था में, उसके हर पल होने वाले सृष्टि कार्य को कौन सम्भालेगा।

यदि ईश्वर जन्म नहीं लेता तो फिर राम, कृष्ण, बुद्ध आदि कौन हैं जो समय पर जन्म लेते हैं। युग बीत जाने पर भी वह अमर है ईश्वर से बढ़कर उनका पूजन होता है। क्योंकि ईश्वर कभी जन्म नहीं लेता, उसका कभी किसी के साथ साक्षात्कार नहीं होता इसीलिये मानव अपना कल्याण करने वाले तथा दु:ख विनाशक व्यक्ति को ही भगवान, प्रभु, ईश्वर मानकर उसकी पूजा करता है।

भगवान, राम, कृष्ण, बुद्ध, स्वामी विरजानन्द और महर्षि स्वामी दयानन्द आदि यह वह मुक्त आत्माएं थी जिनको परमात्मा मोक्ष काल की समाप्ति पर पुन: मानव कल्याण के लिये धरती पर अवतरित करता है। मानव कल्याण हेतु ही उनका जन्म होता है। कठोर से कठोर कष्ट झेल कर दुष्टों का विनाश व श्रेष्ठों की रक्षा करते हैं। शायद इसी उद्देश्य से ही ईश्वर इन मुक्त आत्माओं को धर्म की हानि, पाप, अनाचार आदि के घोर अन्धकार काल में धरती का अवतरित करता है।

जिस समय महर्षि का भारत की पावन भूमि पर अवतरण हुआ उस समय देश विघटन के कगार पर था, अंग्रेजों की गुलामी की जंजीरों में जकड़ा था। विदेशी शासकों के शोषण ने किसानों, कारीगरों विशेषकर बुनकरों की तथा श्रमिकों की कमर तोड़ दी। तंग आकर आत्महत्याएं करने लगे। देश का धन ब्रिटेन में जाने के कारण देश कंगाल हो चुका था। अविद्या का अज्ञानता का डेरा था। सतीप्रथा, पर्दाप्रथा, बालविवाह, दहेजप्रथा जैसी कुरीतियों के कारण नारी जीवन नारकीय व घातक था। वह मात्र भोग का विषय थी। चारों और संकटों का घोर अन्धकार छाया था। आशा की एक भी किरण दिखाई नहीं दे रही थी। ऐसे अन्धकारमय समय में महर्षि देव दयानन्द ने वेद-ऋचाओं की बांसुरी बजा कर, जोर से वेदों का शंख नाद किया। सारा देश झंकृत हो उठा। विदेशी शक्तियां थर्राह उठीं, अविद्या के बादल छंटने लगे।

जिस प्रकार धनुर्धारी मर्यादा पुरुषोत्तम राम, चक्रधारी योगेश्वर कृष्ण, कलंगी वाला गुरू गोविन्द सिंह आदि सब के क्रमश: जीवन चरित्र सामने से चल चित्र की तरह घूम जाते हैं। ठीक इसी प्रकार "वेदों वाला कहते ही ऋषि दयानन्द का जीवन सम्मुख उपस्थित हो जाता है।" महर्षि दयानन्द का काम वेद, सन्देश वेद, जीवन वेद और ऋषि की मृत्यु भी वेद के ही कारण हुई। वेद उनके हृदय में थे मस्तिष्क में थे और जिह्वा पर थे। वह वेदों के लिये जीये वेदों के लिये मरे"।

महर्षि दयानन्द ने तीन हजार ग्रन्थों के गहन स्वाध्याय के बाद यह पाया कि वेदों से मनुष्य का मनुष्यपन और सत्यज्ञान सुरक्षित रह सकता है। ऋषि ने आह्वान किया-"वेदों की ओर लौट चलो" यही सुखी जीवन का मूल मन्त्र है **"वेदोऽखिलो धर्म मूलम्"** (मनु)।

"सुराज्य से स्वराज्य हजार गुणा अच्छा है"

ऋषि ने स्वराज्य की ऐसे समय में आवाज बुलन्द की जब भारतीयों के लिये स्वराज्य शब्द का नाम लेना भी भयंकर था। ऋषि ने स्वराज्य की ऐसी चिंगारी फूंकी कि सारा देश आपसी मत-भेदों को भुला कर एकता के सूत्र में बंध गया। देश की खातिर सर्वस्व लुटाने को परवाने तैयार हो गये। भगतसिंह, राजगुरू, बिस्मिल आदि जैसे हजारों नौजवानों ने अपनी जवानियां देश पर कुर्बान कर दी। स्वामी श्रद्धानंद, पं. लेखराम, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी तथा महात्मा हंसराज जैसे महान व्यक्तियों ने आर्य समाज संगठन के माध्यम से सामाजिक, आर्थिक, बौद्धिक व आध्यात्मिक क्षेत्रों में क्रान्ति ला दी।

महर्षि ने भारत के गिरते गौरव को पुन: स्थापित किया वह भारत के गौरवशाली अतीत के शौदाई (दीवाने) थे। वेदों में से प्रमाण देते हुए लिखा-"हमारे पूर्वजों ने ही सारे संसार को बसाया उसे शिक्षित कर सभ्य बना कर रहन-सहन तथा आचार विचार की शिक्षा दी। तभी भारत वर्ष विश्व गुरू कहलाया और विश्व के क्षितिज पर सूर्य के समान चमचमाया। राष्ट्रीयता की भावना उनमें कूट-कूट कर भरी थीं।"

उनके अथक प्रयास का ही फल है कि आज नारी शिक्षित हो कर जीवन के हर क्षेत्र में अग्रणी है। पर्दाप्रथा, सतीप्रथा, बहुविवाह, बालविवाह जैसी समस्याएं लगभग समाप्त हो चुकी है। विधवा के पुन: विवाह प्रथा ने तो नारी जीवन को सुखी बना दिया है। वेद का सन्देश दिया कि वर्ण व्यवस्था (जाति) का आधार कर्म है जन्म नहीं। छूआ-छूत पाप है। सब मानव समान है। एक ही परमात्मा की सन्तान हैं।

दुनियां वालों ने उन्हें क्या दिया-पत्थर मारे, जीवित सांप फैंके, तलवारों से बार किया 17 बार विषपान कराया, 18 वीं बार जीवन लीला ही समाप्त कर दी। युग पुरुष, परमपिता परमात्मा भले न हो, ईश्वर के प्रतिनिधि के रूप में धरती पर अवतरित हो कर ईश्वर की सर्वोत्तम तथा प्रिय कृति मानव की सेवा कर पुन: पुन: मोक्ष को प्राप्त करते हैं। इसीलिये यह भगवान कहलाते हैं।

आज पुन: देश व देशवासियों की स्थिति शोचनीय है, संकट में हैं। देश में कोई शक्तिशाली कर्णधार व देश हितकारी नहीं हैं। सभी अपने स्वार्थ के दल-दल में ऐसे फंसे है कि उन्हें देश दिखाई नहीं देता। महान भारत की साख में कमी आयी है। सम्पूर्ण विश्व में भ्रष्टाचार की सूची में भारत का नीचे से पांचवा नम्बर है। आतंकवादी लम्बे समय से देश में जहां चाहे धमाके करते रहते हैं। अनैतिकता, अनाचार व बलत्कार की घटनाएं तो प्रतिदिन की साधारण बात है। महर्षि ने सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास में लिखा है ऐसे अपराधियों को तो तुरन्त व कठोर दण्ड देना चाहिये।

विदेशी संस्कृति का बढ़ता प्रेम नारी जाति की अश्लीलता को बढ़ावा दे रहा है। मां-बाप की आय का 40 प्रतिशत धन बच्चों की विदेशी जीवन शैली, मंहगी शिक्षा व खान-पान पर खर्च हो रहा है। न्याय की लम्बी प्रक्रिया व नरम दण्ड व्यवस्था के कारण अपराधों की संख्या बढ़ रही है। जेलें बड़े-बड़े अपराधियों का संरक्षण गृह बन गई हैं। तुष्टिकरण के कारण व फूट डालो व शासन करो की विदेशी नीति सर्वोपरी है। अत: आज देश आर्थिक, सामाजिक, नैतिक आध्यात्मिक व राजनीति पतन की चरम सीमा पर है। आर्यावर्त्त देश की यह दुर्दशा देख कर मन पीड़ा से गुन-गुना उठता है।

बी-9, ध्रुवमार्ग, तिलकनगर, आदर्शनगर, जयपुर (राजस्थान)

नकारात्मक विचारों का क्या करें....?

❐ डॉ. सूर्यदेव शास्त्री

नीति का वाक्य है- **'मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयोः।'** अर्थात मन ही बन्धन का कारण है और मन ही मोक्ष का कारण बनता है। दर्शनकार का सूत्र है जिसमें मन के कार्य को कहा है-**'संकल्प विकल्पात्मकं मनः'** अर्थात संकल्प और विकल्प करना मन कार्य है। सकारात्मक और नकारात्मक विचारों का ठिकाना मन है। इस मन में बड़ी तेजी से विचारों का प्रवाह चलता रहता है। यह बहुत ही सूक्ष्म प्रवाह है। जैसे हल्की सी रूई हवा के बहाव के साथ ही उड़ जाती है। उसी तरह व्यक्ति को जैसा सहायक विचार प्राप्त होता है। यह वैसा ही सोचने लग जाता है। मन के सकारात्मक विचार प्राप्त होता है यह वैसा ही सोचने लग जाता है। मन के सकारात्मक विचार तो उन्नति की ओर ले जाने का कार्य उसी प्रकार नकारात्मक विचार अवनति की ओर जाने का कार्य करते हैं। यद्यपि अधः पतन की ओर तो कोई बना रहता है हम न चाहते हुए भी नकारात्मक विचारों से घिरे रहते हैं। धीरे-धीरे ये विचार परिपक्व होते चले जाते हैं, और हमारा जीवन में एक नई प्रकार की दृष्टि से देखने लग जाते हैं। हमें सभी पारिवारिक लोगों के विचारों में दोष दिखाई देने लग जाते हैं। हमें समाज में सभी लोग गुणहीन दिखाई देने लग जाते हैं, हमें कोइ भी व्यक्ति गुणवान दिखाई नहीं देता। बड़े-से-बड़े महापुरूषों में भी स्वार्थ दिखाई देने लगता हैं सभी अवसरवादी असहायक और असमर्थ दिखाई देने लगते हैं। ऐसे में एक प्रश्न उभरकर सामने आता है कि इन नकारात्मक विचारों का क्या करें क्या नकारात्मक विचारों से मुक्ति सम्भव है? क्या नकारात्मक ऊर्जा को सही दिशा में लगाया जा सकता? यदि ऐसा हो जाए तो समाज का रूख बदला जा सकता है? राष्ट्रीय विचारधारा को नहीं दिशा दी सकती है। ऐसे दुरूह प्रश्न के उत्तर में मैं योगदर्शनकार की मान्यता स्थापित करना चाहता हूँ, इस प्रश्न को मैं दुरूह इसलिए कहता हूँ क्योंकि नकारात्मक सोच का व्यक्ति जीवन भर कष्ट में रहता है तथा परिवार एवं समाज में शान्ति स्थापित होने नहीं देता। उसे प्रार्थना, भक्ति, सत्सङ्ग. आदि गुण बौने दिखाई देते हैं।

योगदर्शनकार की मान्यता है कि नकारात्मक शक्ति को नकारात्मक शक्ति ही सही दिशा देने का कार्य करती है। अंग्रेजी में कहावत है- Two negatives are a positive. अर्थात दो बार मना करने का अर्थ एक हाँ के समान हो जाता है। पूज्य गुरूदेव स्वामी दीक्षानन्द जी महाराज कहा करते थे-**''उल्टे को उल्टा कर दो''** तो सीधा हो जायेगा।

इसके अतिरिक्त एक विचार और भी है इसके समाधान के लिए-**''वितर्कबाधने प्रतिपक्षभावनम्।''** अर्थात् हम जिन बातों का विरोध कर रहे हैं एक बार उन विरोधों का निरोध करने का मन बना लें। अथवा किसी ज्ञानी पुरूष की सङ्ग.ति का सहारा लें। सत्सङ्ग. में जाना शुरू करें, प्रार्थना का सहारा लें, ईश्वर से प्रार्थना किया करें। एकदम तो नहीं परन्तु धीरे-धीरे आपकी नकारात्मक ऊर्जा सकारात्मक कार्यो में लगनी शुरू हो जायेगी। सूर्योदय आपको प्रिय लगेगा, बीती बातों की चिन्ता कम होती चली जायेगी लेकिन यह सब धीरे-धीरे ही सम्भव है क्योंकि आपकी शक्ति आपको नकारात्मक कार्यो की ओर आकृष्ट करती है और आप उसी दिशा में खिंचे चले जाते हैं। इसलिए बड़ी सावधानी से आपको अपनी ऊर्जा सकारात्मक कार्यो में नियोजित करनी है। आप अपनी जिम्मेदारियों को पूरा करने में तनिक भी पीछे न हटें क्योंकि नकारात्मक ऊर्जा वाला व्यक्ति अपने कार्य को या तो करता नहीं है, और यदि करता है तो बिना मन से करता है। अथवा अपने कार्य को दूसरों के कन्धों पर डालने की भरपूर कोशिश करता है। ऐसे व्यक्ति को अपनी जिम्मेदारियां बोझ अनुभव होने लगती हैं। ध्यान रहे-**''बोझ ढोने वाला घोड़ा दुलत्ती नहीं मार सकता और दुलत्ती मारने वाला घोड़ा बोझ नहीं उठा सकता इसलिए जिम्मेदारियों का बोझ उठाना शुरू करें।''**

नकारात्मक विचार है अन्धकार की तरह और सकारात्मक विचार हैं प्रकाश की तरह। ध्यान रखने की बात यह है कि हमें केवल प्रकाश के लिए प्रयत्न करना पड़ता है। नकारात्मक विचार अर्थात् अन्धकार के लिए किसी प्रकार का प्रयत्न नहीं करना पड़ता, वे तो अवसर पाते ही स्वयं घुसे चले आते हैं। जिस प्रकार प्रकाश के लिए, ज्ञान के लिए, प्रयन्त करना पड़ता है, वैसा प्रयत्न अज्ञान अथवा अन्धकार के लिए नहीं करना पड़ता है। इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि आपने अन्धकार को मिटाने के लिए दीपक जला दिया और आपकी जिम्मेदारियां समाप्त हो गई। आपने बच्चों को पढ़ने के लिए विद्यालय में प्रवेश दिला दिया और आपकी जिम्मेदारी समाप्त हो गयी। आपने गीता सरीखी पुस्तक खरीदकर सिराहने रख ली और आपकी जिम्मेदारी समाप्त हो गयी। नहीं, आपको इस दीपक को प्रकाशयुक्त बनाये रखने के लिए इस पर निरन्तर ध्यान रखना पड़ेगा, इसमें तेल, बत्ती तथा विचारों के प्रवाह रूपी तेज हवा से भी बचाना पड़ेगा। इसे प्रकाशयुक्त बनाये रखने के लिए चूहे से भी बचाना पड़ेगा और कौवे से भी। पुराने समय में जब साधनों का अभाव होता था तो माताएं आटे का दीपक बना लिया करती थी। लेकिन इसे दो तरह से बचाना पड़ता था। एक तो यदि इसे घर के अन्दर रख दिया तो चूहों के ले जाने का डर बना रहता था तथा दिन में बाहर छोड़ देने पर कौवों से डर बना रहता था। ठीक है इसे आपने चूहों और कौओं से बचा लिया। अब एक नयी जिम्मेदारी सामने आती थी कि इसे कहाँ रखें? जो कि इसके प्रकाश का अधिक लाभ उठाया जा सके तो ऐसे में दीपक को दहलीज पर रख दिया जाता था क्योंकि दहलीज पर रखा हुआ दीया घर के अन्दर भी प्रकाश देता और घर के बाहर भी प्रकाश देने वाला होता था। इसी बात को ध्यान में रखकर इस न्याय को ''दहली दीपकन्याय'' से पुकारा जाता था- आज की भाषा में इसे 'आम के आम और गुठलियों के दाम' कहा जाता है।

इस दृष्टान्त से यह सिद्ध होता है कि बालकों में प्रकाश के समान गुणों का आधान किस प्रकार हो जो गुण घर के अन्दर भी सम्मान देने वाले हों और वही गुण घर के बाहर भी सम्मान दिलाने वाले हों। यूं तो आपके द्वारा किया गया प्रत्येक अच्छा कार्य सम्मान दिलाने वाला होता है और किया गया बुरा कार्य अपमान दिलाने का कार्य करता है। और यह भी सत्य है कि इस दुनिया में कोई प्राणी अपमानित होना नहीं चाहता तथा सम्मानित होना सब चाहते हैं। महाकवि महर्षि बाल्मीकि ने तो यहाँ तक लिख दिया कि यदि इस दुनिया में सब से तुच्छ धूल को मान लिया जाए तो वह धूल भी अपमानित होना नहीं चाहती, यदि धूल में भी कोई ठोकर मारता है तो वह धूल भी सीधे सिर पर वार करती है। इसी प्रकार कुत्ता दर-दर घूमता है टुकड़े की इच्छा को लिये। वह कुत्ता यह इच्छा तो करता है कि उसे टुकड़ा मिले लेकिन यह कभी नहीं चाहता कि उसे कोई दुत्कारे।

इसी प्रकार कोई भी प्राणी तिरस्कृत होना नहीं चाहता और सम्मानित होना सब चाहते हैं। ध्यान रहे-सद्‌गुणों के कारण सम्मान तथा दुर्गुणों के कारण अपमान प्राप्त होता है।

बालकों की परवरिश करते हुए माता पिता और आचार्यों का यह दायित्व है कि बालक में किसी भी प्रकार का दुर्गुण प्रवेश न करने पावे। उस पर कुशल माली की तरह निगरानी रखे, भले ही निगरानी रखते हुए आपके ऊपर राख, गोबर, धूल, जैसे लांछन भी क्यों न लग जायें।

महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना करते हुए लिखा था-मैंने आर्यसमाज रूपी एक उद्यान लगाया है। इससे मेरी स्थिति एक माली जैसी है। पौधों में खाद डालते समय, राख और मिट्टी माली के सिर पर पड़ ही जाया करती है। मुझ पर राख और धूल जितनी पड़े, मुझे इसका कुछ भी ध्यान नहीं, परन्तु वाटिका हरी-भरी बनी रहे और निर्विहन फले फूले।

बालकों का निर्माण राष्ट्र का निर्माण है, बालकों के अन्दर सद्गुणों को विकसित करने के लिए निरन्तर प्रयत्न करते रहें। माता पिता और आचार्य बालकों को कड़ी मेहनत करने की प्रेरणा करते रहें।

ध्यान रहे- "शान्त समुद्र का नाविक कभी कुशल नाविक नहीं होता।" बालकों में विपरीत परिस्थितियों में जीने की कला होनी चाहिए जिससे उनका भविष्य उज्ज्वल हो। उनके उज्ज्वल भविष्य की लौ ही देश को प्रकाशित करने का कार्य करेगी। आज सफल होना तो सब चाहते हैं मगर सफलता के लिए किये गये प्रयत्न को बीच में छोड़ हिम्मत हारकर बैठ जाते हैं। ध्यान रहे- वीर पुरूष तो वे हैं जो विघ्नों के बार-बार आने पर भी हिम्मत नहीं हारते बल्कि मुकाबला करते हैं।

– डी.ए.वी. सेक्टर-14, फरीदाबाद

आर्य समाज मॉडल टाउन जालन्धर में भजन संध्या

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, मॉडल टाउन, जालन्धर में वैदिक भजन संध्या का आयोजन किया गया। सर्वप्रथम श्री सत्यप्रकाश व श्री बुद्धदेव जी के ब्रह्मत्त्व में यज्ञ किया गया। मुख्य अतिथि जस्टिस एन.के. सूद, उपप्रधान (सपत्नीक), श्री अरविन्द घई, सेक्रेटरी (सपत्नीक), डॉ. सुदर्शन शर्मा, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब जसकिरण हरीका, प्रबन्धिका के अतिरिक्त आर्यसमाज मॉडल टाउन, जालन्धर एवं डी.ए.वी. संस्थाओं के आर्य महानुभावों ने यज्ञ में आहुतियाँ डालीं। श्री सुरेन्द्र आर्य जी एवं श्रीमती रश्मि घई जी ने अपने सुरीले भजनों से खूब समा बांधा और आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के सम्मान में अपने सुरीली आवाज में भजन भेंट किए। आचार्य डॉ. जयेन्द्र जी ने आर्य समाज का योगदान, वेदों का महत्त्व, सामाजिक मुद्दे जैसे जातिप्रथा, छुआछूत, अंधभक्ति पर अपने प्रखर विचार रखे। उन्होंने ओ३म् के नाम को सर्वोपरि बताया तथा इसका हर रोज जप करने को कहा। आर्यसमाज मंदिर, माडल टाउन के प्रधान श्री अरविन्द घई जी ने वेद मन्त्रों में छिपे रहस्यों पर भी रोशनी डाली। प्रिंसिपल श्री विनोद कुमार ने आर्य समाज के सिद्धांतो पर प्रकाश डालते हुए उन पर हमेशा चलने का प्रण लिया तथा वेदों का अध्ययन और प्रतिदिन हवन करने को कहा।

टंकारा में सरल आध्यात्मिक जीवन विज्ञान शिविर का आयोजन

ऋषि दयानन्द के जनम के द्विशताब्दी वर्ष को पूरे विश्व में उत्साह एवं ऊर्जा से मनाया जा रहा है। ज्ञान ज्योति वर्ष के बड़े ही उपयुक्त नामाभिधान से पूरे वर्ष भारत सरकार भी सत्य अर्थ के प्रकाशक के कार्यो ओर देन को स्मरण कर कृतज्ञता का परिचय दे रही है। उसी कड़ी में ऋषि जन्मभूमि एवं टंकारा ट्रस्ट इस वर्ष विशेष रूप से कई प्रेरक कार्यक्रमों का आयोजन कर रहा है। इस प्रेरणास्थल में सरल आध्यात्मिक जीवन विज्ञान शिविर सफलतापूर्वक सम्पन्न किया गया। आदरणीय अजयजी (दर्शनाचार्य, भावनगर) का तत्वावधान-द्विशताब्दी वर्ष-एवं हम सबके प्रेरक, महान आचार्य, आर्यो कि सभ्यता-संस्कृति के रक्षक-संवाहक ओर पुन: जागरण के प्रणेता ऋषिवर कि भूमि का त्रेत-शिविरार्थियों को प्रेरणा-उत्साह और संकल्पबद्ध होने के लिए पूर्ण रूप से अनुकूल एवं अनुरूप था। टंकारा ट्रस्ट कि भव्य यज्ञशाला में किया हुआ देवयज्ञ और सूर्योदय एक नई आशा कि किरण लेकर जा रहा था। महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट कि गौशाला, उपदेशक महाविद्यालय, योगकक्ष-ध्यानकक्ष-सभास्थल और वहा के सारे भवन अनायास ही आकर्षण का केन्द्र बने हुए है। देव दयानन्द कि तपस्या और बलिदान की ज्योतिर्मय कीर्ति सभी शिविरार्थियों को इस त्रेत के कारण और भी देदीप्यमान लग रही थी। टंकारा ट्रस्ट में आयोजित इस शिविरने संसार के उपकार के प्रमुख उद्देश्य ओर कर्तव्य को ओर भी धनिभूत कर दिया।

वाल्मीकि-रामायण में वैदिक वर्णव्यवस्था

❒ डॉ. वेद प्रकाश वेदालंकार विद्यावाचस्पति

वाल्मीकि रामायण भारत का राष्ट्रीय आदिकाव्य है। वैदिक वर्णव्यवस्था का स्वर्णयुग इसमें प्रतिबिम्बित है। वेदों तथा समस्त वैदिक वाङ्मय के अनुशीलन से परिज्ञात होता है कि, वैदिक काल में वर्णव्यवस्था का स्वरूप अपने शुद्धतम रूप में विद्यमान थी। वर्णव्यवस्था के माध्यम से उसके विभाजक तत्त्व जनता को विभक्त नहीं करते थे। उस युग में वर्गजात का कोई प्रश्न नहीं था। यही कारण है कि ऋग्वेद (10.191/3.4) आदेश देता है कि तुम्हारी मंत्रणा में, समितियों में विचारों और चिन्तन में समानता हो, सद्भावना हो, वैषम्य या दुर्भावना न हो-

समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सहचित्तमेषाम्।
देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते।।
समानीव आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।

समष्टि भावना से युक्त होकर वैदिक ऋषि अपने अपने नियत कर्तव्य-पालन पर बल देते रहे हैं-यजुर्वेद में उल्लेख आता है-

ब्रह्मणे ब्राह्मणं क्षत्राय राजन्यं, मरूद्भ्यो वैश्यं तपसे शूद्रम्। (यजुर्वेद 30.5) यहाँ ब्रह्म-कृत्यों के लिए ब्राह्मण, राजकृत्यों के लिए क्षत्रिय, व्यापार-कृषिकर्म के लिए वैश्य और सेवा तथा तपस्या के लिए शूद्र को माना गया है। जब ये सभी वर्ण मिलकर, अपने-अपने धर्म का पालन करते हैं, तभी सम्पूर्ण उन्नति सम्भव है। यजुर्वेद में कहा है-

यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च उभौ संचरतः सह।
तं देशं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र देवाः सहाग्निना।।

इन वैदिक मन्त्रों में सभी वर्णो की सहचारिता और सामंजस्य को राष्ट्रोन्नति मूलक माना गया है। वेद के अनुसार सृष्टि के प्रारंभ में ही प्रजाओं के हित सम्पादक के लिए एक शाश्वत मर्यादा का प्रादुर्भाव स्वयं भगवान् प्रजापति ने किया। जैसे हमारे शरीर में मुख, बाहु-ऊरु और पैर ये चार प्रमुख अंग हैं, वैसे ही समाज रूपी शरीर के निर्वहन के लिए चार वर्ण-अंग विशेष हैं। इन चार वर्णो में वेद ने विद्या के अध्ययन-अध्यापन में कुशल ज्ञान-विज्ञान के प्रसारक, धर्मशास्त्र के प्रवर्तक, राज्य नियमों के व्यवस्थापक, विधिविधान के ज्ञाता, ब्रह्मतेज सम्पन्न, राष्ट्रनीति के निर्धारक तथा प्रजा के प्रणेता को -'**ब्राह्मणोस्य मुखमासीत्**' कथन द्वारा ब्राह्मण की संज्ञा दी है।

राष्ट्र रक्षा के व्रती, राज्यपाल, राष्ट्रपति, सकलशास्त्रों के पारंगत, शास्त्रस्त्र विद्यानिपुण, वीर, शासक, न्यायाधीश, नीति कुशल, राष्ट्रनीति संचालक, लोक रक्षक को बाहू राजन्यः कृतः कहकर 'क्षत्रिय' माना है। व्यापार वृत्ति में निपुण, आर्य शास्त्र के पण्डित, धनोत्पादन में कुशल, कृषि विशेषज्ञ, खनिज शास्त्र पारंगत, राष्ट्रसंपत्ति वर्धक, दानशील, शिल्पकला निष्णात, समस्त शास्त्रस्त्र निर्माता, धनधान्य सम्पन्न, राष्ट्रहित में सम्पत्ति समर्पित करने वाले उद्यमशील वैश्य को ''**ऊरूतदस्य यद् वैश्यः**'' इस सम्बोधन से अभिहित किया है।

अनवरत गतिशील, सेवापरायण, शक्ति भक्ति सम्पन्न, स्वामीभक्ति, विनम्र, भारधारक गुणों वाले शूद्र को=**पद्भ्यां शूद्रोऽजायत**' कहा है। ऋषि दयानन्द जी ने शूद्र का अर्थ इस प्रकार किया है-जो विद्याहीन, जिसको पढ़ने से भी विद्या न आ सके, शरीर से पुष्ट, सेवा में कुशल हो वह शूद्र। (संस्कार विधि गृहस्था श्रम प्रकरण) अथवा जो मूर्खादि गुणवाला हो वह शूद्र है। (सत्यार्थ प्रकाश-चतुर्थ समुल्लास)।

इस वैदिक वर्णव्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति को अपने गुण-कर्म-स्वभाव रूचि के अनुसार अपने वर्ण को चुनने की व्यवस्था है-वर्णोः वृणोतेः (निरूक्त 2/3), वह तदनुसार कर्त्तव्य का पालन करता है। इसी तथ्य को गीता में **चातुर्वर्ण्य मया सृष्टं गुणकर्म विभागशः** द्वारा पुष्ट किया गया है। (गीता अध्याय 4.9 लोक 13) वैदिक वर्ण व्यवस्था में लचीलापन है। सभी-वर्ण अपनी अपनी जगह पर खूँटे की तरह गड़े हुवे नहीं हैं। कोई भी वर्ण नीचे से ऊपर उठ सकता है, और इसके विपरीत किसी भी उच्च कहे जाने वाले वर्ण का पतन भी हो सकता है। आचार को प्रथम मानकर वेदों ने प्रत्येक वर्ण (व्यक्ति) को ऊपर उठने की पूरी स्वतन्त्रता दी है-

''**आरोहणमाक्रमणं जीवतो जीवतोऽयनम्**'' (अथर्ववेद 3.30. 7) ब्राह्मण सदा ब्राह्मण ही बना रहे और शूद्र सदा शूद्र ही बना रहे-ऐसा कठोर बन्धन वैदिक नहीं है। ब्राह्मण वर्ग के प्रति उदारता और शूद्र वर्ण के प्रति निर्ममता वैदिक वर्ण व्यवस्था का अंग नहीं थी। इस व्यवस्था में राज्यशासन की प्रभुता क्षत्रियों के हाथ में रहती थी और वे राजनीति के ज्ञाता ब्राह्मणों के निर्देश पर अपनी प्रभुता शक्ति का प्रयोग करते थे। वैश्य जन ब्राह्मणों से ज्ञान सीखकर तथा क्षत्रियों की रक्षा में रहकर, भौतिक सम्पत्ति को पैदा करने थे। शूद्र इन तीनों वर्णो की सेवा में तत्पर रहते थे। ब्राह्मणों का ज्ञान, क्षत्रियों की शक्ति, और वैश्यों की सम्पत्ति राष्ट्रहित में खर्च होती थी।

वैदिक वर्णव्यवस्था की यह मर्यादा वाल्मीकि रामायण में प्रतिपद परिलक्षित होती है। इसके परिक्षण और स्थिरीकरण के प्रति वाल्मीकि-रामायण में अत्यन्त कठोर नियम थे। इसका प्रमुख कारण यह था कि तत्कालीन समाज एक ऐसी सुदृढ़ व्यवस्था पर आधारित था जो वेदसम्मत था।

रामायण का जनसामान्य वेदानुकूल वर्णो और आश्रमों में विभक्त होता हुआ सहयोग और सौहार्द के तन्तुओं से परस्पर अनुस्यूत था। इसमें ब्राह्मणों को बौद्धिक एवं आध्यात्मिक योग्यता के कारण असाधारण सम्मान एवं विशेषाधिकार प्राप्त थे। क्षत्रिय उनका वर्चस्व स्वीकार करते थे। वे नीति-परम्परा के अनुसार राष्ट्र का संचालन करते थे। वेद का यह राष्ट्रीय प्रार्थना मंत्र-**ओं आब्रह्मन् ब्रह्मणो ब्रह्मवर्चस्वी जायताम्। आ राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधि महारथो जायताम्**''। उस काल में पूर्ण चरितार्थ था। वैश्य वाणिज्य व्यापार द्वारा राष्ट्रीय समृद्धि में योगदान करने और शूद्र अन्य वर्णो की सेवा में लगे रहते थे।

वाल्मीकि-रामायण में सामाजिक जीवन की मूलआधार शिक्षा वैदिक वर्ण व्यवस्था ही थी। समाज में यही धारणा थी कि ईश्वर ने सभी को समान रूप से उत्पन्न किया है- **सर्वे अमृतस्यपुत्राः**। अपने कर्मो एवं गुणों के अनुसार ही लोग विभिन्न जातियों में विभक्त हैं। वस्तुतः रामायण में सिद्धान्त रूप से जातिपाति काभेदभाव नहीं था-परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से जाति के बन्धन कठोर थे। तदुपरान्त भी समाज में प्रत्येक वर्ण के व्यक्ति का उचित सम्मान होता था-कहीं भी जात-पात का भेदभाव नहीं था।

इस वेदानुकूल वर्णव्यवस्था में ब्राह्मणों का स्थान सर्वप्रथम था। ब्राह्मण माता-पिता से उत्पन्न अथवा विद्वान ब्राह्मणों के विहित कर्म करने वाला व्यक्ति ब्राह्मण कहा जाता था। विश्वामित्र ने जन्मना क्षत्रिय होते

(शेष पृष्ठ 14 पर)

॥ હિન્દુ ધર્મનું સાહિત્ય ॥

હિન્દુ ધર્મનું સાહિત્ય ઘણું વિસ્તીર્ણ છે. હિન્દુધર્મ અતિ પ્રાચીન છે. હિન્દુજીવન અને હિન્દુસંસ્કૃતિમાં ધર્મ અને અધ્યાત્મ કેન્દ્રસ્થ અને સૌથી પ્રધાન તત્વ છે. આમ હોવાથી હિન્દુધર્મમાં અપરંપાર ગ્રંથોની રચના થઈ છે. વિધર્મી આક્રમણકારો, પ્રાકૃતિક દુર્ઘટનાઓ, પુસ્તકોની જાળવણીના આધુનિક સાધનોનો અભાવ, ઘણો લાંબો કાળ આદિ કારણોને લીધે હિન્દુધર્મ, આધ્યાત્મવિધા અને દર્શનના ઘણાં ગ્રંથો નષ્ટ થઈ ગયા છે. આમ છતાં જે ગ્રંથો ઉપલબ્ધ છે, તેમની સંખ્યા પણ લગભગ અગણિત છે. આ બધા ગ્રંથોના માત્ર નામની યાદી કરીએ તો પણ એક મોટો ગ્રંથ બને. હજારો ગ્રંથો એવા પણ છે કે જે હસ્તલિખિત સ્વરૂપમાં છે, અને હજુ સુધી પ્રકાશિત થયા નથી.

હિન્દુધર્મના સમગ્ર પ્રમાણભૂત સાહિત્યને અગિયાર વિભાગમાં વહેંચવામાં આવે છે. જેમ કે 1. વેદ 2. વેદાંગ 3. ઉપવેદ 4. ઈતિહાસ 5. પુરાણ 6. સ્મૃતિ 7. દર્શન 8. નિબંધ 9. ભાષ્ય 10. સાંપ્રદાયિક ગ્રંથો 11. આગમ ગ્રંથો.

(૧) વેદ : –

વેદ એટલે વૈદિક સાહિત્ય. વૈદિક સાહિત્યને સાત વિભાગમાં વહેંચવામાં આવ્યા છે. (1) મંત્રસંહિતા (2) બ્રાહ્મણ ગ્રંથો (3) આરણ્યક ગ્રંથો (4) ઉપનિષદો (5) સુત્રગ્રંથો (6) પ્રાતિશાખ્ય (7) અનુક્રમણી

(1) મંત્રસંહિતા :

વેદ મુલતઃ એક છે, પરંતુ ભગવાન વેદવ્યાસે વેદને ચાર વેદમાં વહેંચ્યા છે. ઋગવેદ, યજુર્વેદ, સામવેદ અને અથર્વવેદ. વેદના મંત્રો હવે ગ્રંથસ્થ થયા છે. પ્રાચીનકાળમાં વેદ ગ્રંથસ્થ થતાં નહિ. હજારો વર્ષથી વેદ કર્ણોપકર્ણ પરંપરાથી જ જળવાયા છે. વેદપાઠ કરવાની આપણી ઘણી પ્રાચીન પરંપરા છે. પ્રત્યેક વેદની અનેક શાખાઓ છે. આ બધી શાખાઓમાંથી ઘણી લુપ્ત થઈ ગઈ છે, અને કેટલીક અદ્યાપિ પર્યત અખંડ સ્વરૂપે ચાલુ રહી છે.

(2) બ્રાહ્મણ ગ્રંથો :

વેદમંત્રોનો યજ્ઞમાં ક્યારે અને કેવી રીતે ઉપયોગ થાય, વેદમંત્રોનો રહસ્યાર્થ શું છે, વેદમંત્રોના ઉપયોગપૂર્વક થતાં ધાર્મિક-આધ્યાત્મિક પ્રયોગો કેવી રીતે થાય આદિ બાબતોની વિચારણા બ્રાહ્મણગ્રંથોમાં કરવામાં આવી છે. ચારેય વેદના કુલ મળીને સત્તર બ્રાહ્મણગ્રંથો થાય છે. આમાં ઋગવેદનું અતૈરેય બ્રાહ્મણ, કૃષ્ણ યજુર્વેદનું તૈત્તિરીય બ્રાહ્મણ અને શુક્લ યજુર્વેદનું એક શતપથ બ્રાહ્મણ ઘણા પ્રચલિત છે. વેદની કેટલીય શાખાઓની સાથે ઘણાં બ્રાહ્મણગ્રંથો પણ લુપ્ત થઈ ગયા છે.

(3) આરણ્યક ગ્રંથો :

બ્રાહ્મણ ગ્રંથોના ભાગરૂપે આરણ્યકો રહેલા છે. અરણ્ય (વનમાં) ચયન થયું અને અરણ્યમાં અધ્યયન થયું, તેથી આ ગ્રંથોને આરણ્યકો કહે છે. વર્તમાનકાળમાં 6 આરણ્યકો ઉપલબ્ધ છે. ઋગવેદના ત્રણ આરણ્યક છે – ઐતરેય આરણ્યક, શાંખાયન આરણ્યક અને કૌષીતકિ આરણ્યક. કૃષ્ણ યજુર્વેદના બે આરણ્યકો છે – તૈત્તિરીય બ્રાહ્મણ અને મૈત્રાયણી આરણ્યક. શુક્લ યજુર્વેદનું એક આરણ્યક છે – બૃહદારણ્યક. શતપથ બ્રાહ્મણનો અંતિમકાંડ તે જ બૃહદારણ્યક છે. આ બૃહદારણ્યકના અંતિમ અધ્યાયો, તે જ બૃહદારણ્યક ઉપનિષદ છે.

(4) ઉપનિષદો :

ઉપનિષદો વેદનો અંતિમ અને નિષ્કર્ષરૂપ ભાગ છે, તેથી વેદાંત ગણાય છે. ઉપનિષદો મુલતઃ આધ્યાતમવિદ્યાના ગ્રંથો છે. ઉપનિષદોમાંથી ભારતીય દર્શનની અનેક શાખાઓ જન્મી છે, વધી છે અને વિકસી છે. શ્રીમદ્ ભગવદ્ ગીતા ઉપનિષદોનો પણ સારરૂપ ગ્રંથ ગણાય છે. ઉપનિષદો, બ્રહ્મસુત્ર અને શ્રીમદ્ ભગવદ્ ગીતા – આ ત્રણ મળીને વેદાંતની પ્રસ્થાનત્રયી બને છે. ઉપનિષદોની સંખ્યા લગભગ 300 ની છે. આમાંના પ્રધાન 13 ઉપનિષદો ગણાય છે. જેમકે ઈશ, કેન, કઠ, માંડૂક્ય, મૂંડક, પ્રશ્ન, ઐતરેય, તૈત્તિરીય, છાંદોગ્ય, બૃહદારણ્યક, શ્વેતાશ્વર, કોષીતિકી અને નૃસિંહતાપની. આમાંના પ્રથમ અગિયાર પર ભગવાન શંકરાચાર્યના ભાષ્યગ્રંથો રચાયા છે.

(5) સુત્રગ્રંથો :

વૈદિક સુત્રગ્રંથો ત્રણ સ્વરૂપનાં છે. શ્રૌતસૂત્ર, ગુહ્યસુત્ર અને ધર્મસૂત્ર. શ્રૌતસૂત્રમાં વૈદિક કર્મકાંડની વિચારણા કરવામાં આવી છે. ગુહ્યસુત્રોમાં કુલાચારનું વર્ણન છે. અને ધર્મસુત્રોમાં ધર્માચારનું વર્ણન છે. આ ત્રણ પ્રકારના સુત્રો ઉપરાંત, શુલ્બસૂત્રો નામના સુત્રો પણ વૈદિક સાહિત્યમાં મળે છે. શુલ્બસુત્રમાં વૈદિક ભૌતિક વિજ્ઞાનનું વર્ણન કરવામાં આવેલું છે. યજુર્વેદમાં કાત્યાયન શૂલ્બસૂત્ર છે, જેમાં ભૂમિતિ શાસ્ત્રનું વર્ણન છે. ઘણા શુલ્બસુત્રો લુપ્ત થઈ ગયા છે.

(6) પ્રાતિશાખ્ય :

વેદની અનેક શાખાઓ છે. પ્રત્યેક શાખાને પોતાની વિશિષ્ટ પરંપરાઓ હોય છે. શાખાની આ વિશિષ્ટ હકીકતોની નોંધ આ પ્રાતિશાખ્યમાં કરવામાં આવે છે. ઉચ્ચાર પધ્ધતિ, યજ્ઞવિધિવિધાન, આહારવિહારની વિશિષ્ટતાઓ આદિ હકીકતો શાખાની પરંપરા પ્રમાણે પ્રત્યેક શાખાની પોતાની આગવી હોય છે. આ વિશેષ હકીકતોની નોંધ પ્રાતિશાખ્યમાં થાય છે. ઋકપ્રાતિશાખ્ય, તૈત્તિરીયપ્રાતિશાખ્ય, પ્રાતિશાખ્યસુત્ર મળે છે.

Let`s have a hearty laugh

❑ **Arun Kumar Gupta**

Laughter, often celebrated as the finest remedy for life`s tribulations, possesses a remarkable influence over our physical and emotional well-being. It serves as a universal language, a bridge that unites individuals through shared moments of joy. Beyond its immediate pleasures, laughter extends its nurturing touch to our very essence, promoting health, vitality and longevity. The act of laughter sets off a cascade of physiological responses that work wonders for our bodies, It triggers the release of endorphins, our natural painkillers and disease inhibitiors, thus fostering a stage of overall levels, leading to a relaxation response within the body. When we laugh, the heavy burdens of tensio are lifted, allowing our bodies to rejuvenate and heal.

A fascinating study involving a group of players unveiled astounding findings, linking genuine laughter to an extended average lifespan. The positive impact of laughter on the duration of our existense cannot be understated. Scholars abroad have identified an invididual`s cheerful nature as a pivotal factor in prolonging life, and modern science has validated this connection. Laughter goes beyond being a remedy for disease; it`s a key to unlock the gates to a longer, healthier life.

But laughter isn`t just a fleeting emotion; it`s a comprehensive workout that revitalizes our entire system. This joyous act engages our muscles, improves circulation, and enhances oxygen absorption. It`s akin to an internal exercise routine, promoting vibrant health and enduring vitality. This phenomenon was vividly depicted in the famous film "Munna Bhai M.B.B.S, "highlighting how the protagonist uses laughter, and even he isnot possessing any medical expertise, was able to foster a sense of recovery among patients. The movie underscored the power of laughter by showcasing its ability to activate lymphocytes and stimulate the production of killer cells, essential in combatting cancer-causing agents.

Moreover, laughter serves as a natural stress buster, reducing the secretion of cortisol the notorious stress hormone. Maintaining a happy demeanour prevents premature aging, preserving our youthful spirit and enthusiasm. It even has the transformative effect of altering our apprearance and outlook, making usnot only look but feel younger. By embracing laughter, we tap into the secret of defying the inevitable passage of time.

The enchantment of laughter isn`t confirmed to solitary enjoyment; it flourishes when shared with others. Imagine a cheerful boss, for instance, who creates a positive work environment, lightening the weight of daily tasks. The true beauty of laughter emerges when its shared, becoming a mutual exchange of mirth that magnifies the benefits. The ability to laugh together, finding humour even in challenging situations, is an art that enriches our lives, fostering camaraderie and unity.

Mastering the art of laughter is a transformative journey that shapes our personalities and relationships. A joyful demeanour radiates self-confidence, enabling us to confront life`s trails with resilience and a radiant smile. Those who can find solare in laughter, even in moments of sorrow, possess a profound, understanding of the human experience. The uplift others, alleviating their burdens, and in the process, spread happiness.

Let us not forget the wisdom of laughing with others, not at them. In this interconnected world, empathy and compassion are essential. Laughter that orgtinates from a place of understanding and camaraderie strengthens unity and solidarity. It reinforces the simple yet powerful adage of "live and let live." reminding us to embrace the" all right, it doesn`t matter mind-set, which serves as a potent antidote for life`s woes.

Laughter is a potent elixir, a precious gift that we must cherish and share. It opens the dooor to a longer, healthier life, infusing us with vitality and the strength to face whatever challeges come our way. Let`s embrace the art of laughterer we go. In a world brimming with stress and adversity, laughter remains a guiding light, reminding us that happiness is a powerful choice, especially when facing the storms of life. So, let`s laugh heartily, but let`s also remember to laugh with love, compassion, and an understanding that this beautiful gift holds the transformative power to shape lives for the better.

Families too benefit from the healing power of laughter. Laughter binds family members, creating cherished memories and diffusing tensions that naturally arise in close-knit relationships. In difficult times, a shared moment of laughter can act a soothing balm, reaffirming the strength of family bonds.

Moreover, laughter has a profound effect on our mental health. It acts as a shield against anxiety and depression, serving as a powerful copingmechanism. When we laugh, our minds momentarily escape the shackles of worry, allowing us to see the lighter side of life. It`s reminder that amidst life`s challenges, there is still room for joy and optimism.

The impact of laughter on our emotional well-being is evident in its ability to enhance our resilience. Those who possess a hearty sense of humour tend to navigate life`s ups and downs with a positive outlook. They approach problems

(Rest on Page 14)

(पृष्ठ 11 का शेष)

हुए भी-ब्राह्मण विहित कर्म करने के कारण, घोर तपस्या द्वारा ब्राह्मणत्व को प्राप्त कर लिया था-

ब्राह्मणों की आज्ञा के विरूद्ध राजा भी कर्म नहीं कर सकता था। राजा दशरथ ने अपने पुत्रेष्टि यज्ञ में समुन्त्र के द्वारा सुयज्ञ, वामदेव, जाबलि, कश्यप, वसिष्ठ आदि ब्राह्मणों को बुलाया तथा उनके उपस्थित होने पर, सभी ब्राह्मणों का देवता के समान पूजन किया तथा उनकी आज्ञा के अनुसार ही यज्ञ सम्पन्न किया।

सीता के शपथ समारोह में भी श्रीरामचन्द्र जी ने चातुर्वेध सहित ब्राह्मणों को आमन्त्रित करके उनको विशेष सम्मान दिया। जन्मना क्षत्रिय विश्वामित्र भी वसिष्ठ (ब्राह्मण) से पराजित हो जाने के पश्चात् ब्राह्मण को क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र से अधिक बलशाली मानते हुए कहते हैं-

घिग् बलं क्षत्रिय बलं ब्रह्मतेजो बलम् बलम्।
एकेने ब्रह्मदण्डेन सर्वास्त्राणि हतानि मे।।

ब्राह्मण के बाद क्षत्रिय का स्थान था। क्षत्रिय शासक वेदानुकूल चारों वर्णों का पालन करता था। भरत का राम के प्रति यह कथन द्रष्टव्य है-

क्व चारण्यं क्व च क्षत्रं क्व जटाः क्व च पालनम।
ईदृशं व्याहतं कर्म न भवान् कर्तुमर्हसि।।
एष हि प्रथमो धर्मः क्षत्रियस्या भषेचनम्।
येन शक्यं महाप्राज्ञः प्रजानां परिपालनम्।।

(अयोध्याकाण्ड, सर्ग-106, श्लोक 19-20)

अर्थात यदि शरीर को ही कष्ट देने वाले धर्म को ही करने की आपकी बड़ी इच्छा है तो धर्मानुसार ब्राह्मणादि चारों वर्णों के पालन करने का कष्ट आप भोगिये। कहाँ क्षत्रियधर्म और कहाँ जनशून्य वन? कहाँ प्रजापालन और कहां जटाधारण? ऐसे परस्पर विरोधी कार्य आपको नहीं करने चाहिए। क्षत्रिय यदि अपने धर्म का पालन नहीं करता, वह पाप का भागी बनता है और नरकगामी बनता है। राम ने बाली को मारने का यही कारण दिया था। क्षत्रिय धर्म की पालना करते हुए ही श्रीराम परशुराम के क्रोधित होने पर ही अपना पराक्रम प्रदर्शित करते हैं। रामायण के इन प्रसंगों से स्पष्ट है कि वाल्मीकि ने वेद का ही अनुसरण किया हैं। ब्राह्मण के ही समान क्षत्रिय को जितेन्द्रिय, पराक्रमी, यज्ञशील, गुणवान, विद्यावान बनकर धर्मपूर्वक राज्य की धुरा को धारण करना पड़ता था। बूढ़े होने पर दशरथ का कथन है-

राज प्रभाव जुष्टां च दुर्वहामजितेन्द्रियैः।
परिश्रान्त्रोस्मि लोकस्य गुर्वो धर्मधुरं वहन।।

(अयोध्याकाण्ड, सर्ग 2, श्लोक 1)

अर्थात् अजितेन्द्रिय जिस भार को नहीं उठा सकते, मैं राज प्रभावानुसार वही गुरुतर धर्मभार वहन करके थक गया हूँ। इस गुरुतर भार को वे अपने ज्येष्ठ पुत्र राम को सौंपने की अनुमति ऋषियों को देते हैं, जो कि राज्य भार वहन करने में पूर्ण सक्षम और योग्य हैं।

कर्मान्तिकान् वर्धिकनः कोषाध्यक्षांश्च नैगमान्।

(उत्तराकाण्ड सर्ग 91, श्लोक 24)

अर्थात् कार्याध्यक्ष, शास्त्रज्ञ, कोषाध्यक्ष और सेवक सब भरत के साथ अश्वमेघ यज्ञ में चलें। आदि कवि वाल्मीकि ने शूद्रों को भी सेवाकर्म ही कर्तव्य कर्म निर्दिष्ट किया है।

शूद्राः स्वकर्म निरताः जीन् वर्णानुपचारिणः।

(बालकाण्ड, सर्व 6, श्लोक 19)

निषाद राज गुह का राम को कथन है-

वयं प्रेष्या भवान्मर्ता साधुराज्यं प्रशाधि नः।
भक्ष्यं भोज्यं च पेयं लेहयं चैतदुपस्थितम्।।

(अयोध्याकाण्ड, सर्ग 101, श्लोक 39)

युद्धकाण्ड में मृत्य-सेवक के धर्मप्रतिपादन में सेवा-कर्म को प्रमुखता दी गई है-

यो हि मृत्यो नियुक्तः सन् मर्त्रा कर्माणि दुष्करे।
कुर्यातदनुरागेण तमाहुः पुरुषोत्तम्।।
यो नियुक्तः परं कार्य न कुर्यात् नृपतेः प्रियम्।
मृत्यः युक्तः समर्थश्च तमाहुर्मध्यम् नरम्।।
नियुक्तों नृपतेः कार्य न कुर्याद यः समाहितः।
मृत्यः युक्तः समर्थश्च तमाहुः पुरुषाधमम्।।

(युद्धकाण्ड, सर्ग 1, श्लोक 7-9)

रावण भी सीता को उसकी पटरानी बन जाने पर दासियों को लालच देता है-

पञ्चदास्यः सद्मणि सर्वाभरण भूषिताः।
सीते परिचरिष्यन्ति भार्या भवसि मे यदि।।

(अख्यकाण्ड, सर्ग 47, श्लोक 31)

निःसन्देह वाल्मीकि रामायण में विभिन्न जातियों एवं वर्गो में बंटे हुए समाज को, जिस रहस्यमय शक्ति ने सुसंगठित रखा, उसके प्रकट विरोधों में समन्वय स्थापित किया। उसे सत्य, सदाचार और सरपरम्पराओं के मंच पर प्रतिष्ठापित किया, दृष्टिकोण की ऐसी समता और एकात्मता स्थापित कर दी, जिसके समक्ष समस्त वैभिन्य-विरोधाभास तिरोहित हो गये-यह थी-वेदःसम्मत वर्ण व्यवस्था, जिसके कारण रामायण कालीन युग को भारतीय इतिहास का स्वर्णयुग कहा जा सकता है।

(Remainder of page 13)

with a light-hearted attitude, often finding creative solutions, and are more likely to bounce back from setbacks. Laughter equips us with a mental toolbox for overcoming obstacles. In our social interaction, laughter acts as a powerful adhesive. Sharing a laugh with friends creates lasting memories and fosters a sense of belonging. It helps us form deep, menaningful connections by breaking down barriers and creating a comfortable atmosphere where people can be themselves. The bonds forged through shared laughter are stronger and more enduring.

Furthermore, laughter is an expression of our innate ability to find joy in simple pleasures. It teaches us not to take life too seriously, to relish the beauty in everyday moments. The infectiousness of a good laugh can light up a room, spreading positivity like wildfire. It`s a gift that keeps on giving, touching hearts and brightenning days.

So, let us continue to cherish the gift of laughter. Let us laugh with our hearts, let us share our joy, and let us always remembers the remarkable impact it has on our health, our relationships, and our overall outlook on life. As we journey through the uncertainties of the future, let laughter be our constant companion, lighting our path and reminding us that, indeed, laughter is the best medicine.

(पृष्ठ 1 का शेष)

जितनी गाँठे हैं वह उतना ही ऋद्ध, वृद्ध और समृद्ध है। बांस में गांठ है इसीलिए वह इतना लम्बा है। दूर्वा घास में, लौकी आदि लताओं में जो वृद्धि है उसका कारण पर्व है, गांठ ही है। हमारी परम्परा तो पर्व से ही चलती है, इसलिए विवाह में भी हमारे यहाँ ग्रन्थि बन्धन होता है और जन्मदिवस को वर्षगांठ के रूप में मनाते हुए आयुष्यवृद्धि की कामना करते हैं। हमें तो प्रतीत होता है कि यही पर्वों की महान् परम्परा ही है जिससे हम हजारों झञ्झावातों में भी अडिग खड़े हुए हैं और यदि हमें अपने को जीवित रखना है तो पर्वों को जीवन्त रखना होगा। यदि ये पर्व अपने यथार्थ रूप में जीवित रहेंगे तो हमारी सभ्यता जीवित रहेगी, हमारी संस्कृति जीवन्त होगी। अत: संस्कृति के संरक्षक इन पर्वों को जीवित और यथार्थरूप में यथार्थ भावनाओं और प्रतीकों के साथ जीवित रखना हमारा नैतिक कर्त्तव्य है और महत्तर उत्तरदायित्व है।

यह पर्व हमें सिखाता है कि हमारा जीवन केवल हमारे लिए नहीं होना चाहिए इसी भाव के साथ हम अपने घर में आए अन्न के साथ नवसस्येष्टि करते हैं तथा जैसे दीपक सामर्थ्यानुसार यथाशक्ति अंधेरे से लड़ता रहता है वैसे ही हम भी अज्ञान, अन्याय, अभाव और आलस्य रूपी अंधेरे से हमेशा लड़ते रहें। यह अंधेरा कभी हम पर हावी न होने पाये। जितनी शक्ति हमारे पास है उसी से इन अंधेरों से लड़ने के लिए सर्वदा सन्नद्ध रहें। सद्भावना, श्रद्धा और समर्पण के साथ दीप जलना ही पर्व है। दीपों की अवली=पंक्ति बना देने का नाम दीपावली है। किन्तु बाहर दीपक जलाकर अन्दर अन्धेरा रह गया तो पर्व सफल नहीं हो सकता। पर्व का साफल्य अंधेरे के नाश में है।

हम आर्यों के लिए जहाँ यह पर्व आर्य संस्कृति का परिचायक होने से महत्वपूर्ण है वहीं इस पर्व का महत्व अत्यन्त बढ़ जाता है, क्योंकि इसी दिन सन् 1883 में आर्यसमाज के संस्थापक, आर्यसंस्कृति के प्रचारक, वेद सभ्यता के पुनरूद्धारक महर्षि दयानन्द रूपी महादीपक ने करोड़ों छोटे-छोटे दीपकों को प्रज्ज्वलित करने के उपरान्त निर्वाण को प्राप्त किया था। इस पर्व को हम श्रद्धांजलि दिवस के रूप में भी मनाते हैं। मेरे ऋषि ने मोक्ष की महानतम उपलब्धियों को छोड़कर करोड़ों करोड़ दीन दु:खियों, बिछुड़े-पिछड़े, दलित-वलित नरनारियों के दु:खों को दूर करने के लिए, परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़ी भारतमाता के कष्ट को हरने के लिए, स्वनिर्मित मूर्तियों की पूजा में संस्कृति को प्रभुनिर्मित मूर्तियों की पूजा सिखाने के लिए, ईश्वराज्ञा में स्वजीवन को समर्पित कर दिया था। जीवन भर पराये कष्टों को देख कर रोने वाले देव दयानन्द को हमने नहीं समझा और हमारी नासमझी के कारण ही उस देवदूत को सारे जीवन धूल-मिट्टी, कंकर-पत्थर सहना पड़ा और विषपान भी करना पड़ा। जड़ मूर्तियों के उपासक, पत्थरों के पुजारियों के पास पत्थर के अलावा और देने को था भी क्या? बड़प्पन तो उस ऋषि का था जो कहता था-**''मैं तो बाग लगा रहा हूँ, बाग लगाने में माली के सिर पर धूल मिट्टी गिर ही जाया करती है, मुझे इसकी चिन्ता नहीं है। मैं तो बस इतना चाहता हूँ कि यह बगिया हरी-भरी रहे।''** हे दिव्य देवर्षि! तुम्हें प्रणाम।

जीवन भर तिल-तिलकर जलने वाले इस महादीप की ज्वलित शिखा की जीवन्तता ने करोड़ों लोगों को देदीप्यमान किया और जाते-जाते गुरुदत्त जैसे नास्तिक को आस्तिक बना गया। अहा! यह जीवन, यह दीपन, कितना प्यारा था की, तेरी इच्छा पूर्ण हो।'' आइए इस महादीप की दीप्ति से दीप्तिमान होकर ऋषि प्रदर्शित मार्ग पर चलकर पिछड़ों के पथपर करोड़ों दीप जलाकर उस ऋषि को सच्ची श्रद्धांजलि समर्पित करें। यही दीपावली का दीपन, प्रदीपन और उद्दीपन है। आओ दीप जलाएँ साधो! आओ दीप जलाएँ।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की 200वीं जयन्ती को समर्पित रहा काशी वैश्विक गौरव सम्मान

जंग-ए-आजादी में कुर्बान 11 शहीदों के वंशजों का किया गया सम्मान

सभा प्रधान श्री सुरेश चन्द्र आर्य जी को सम्मानित करते हुए श्री अजय जयसवाल , अलगोल फिल्म्स और श्री अजय सहगल, IDES (हिमाचल से)

वाराणसी में 'काशी वैश्विक गौरव सम्मान 2023' का होटल ताज में भव्य आयोजन किया गया। यह कार्यक्रम अलगोल फिल्म्स, मुम्बई के तत्वाधान में आयोजित किया गया, जो पूर्ण रूप से महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की 200वीं जयन्ती को समर्पित था। इस अवसर पर ग्यारह स्वतन्त्रता सेनानियों के वंशजों का सम्मान किया गया। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री सुरेश चन्द्र आर्य जी, प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली ने की। कार्यक्रम के आरम्भ में श्री अजय सहगल, हिमाचल ने ऋषि दयानन्द जी के महान व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए ऋषि महिमा और देश भक्ति की भावना से भरपूर कविताओं से समा बांध दिया। स्वतन्त्रता सेनानियों के वंशजों ने स्वामी दयानन्द सरस्वती जी को श्रद्धा सुमन भेंट करते हुए अपनी अपनी बात कही। कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री सुरेश चन्द्र आर्य जी ने इस कार्यक्रम के आयोजक श्री अजय जायसवाल जी और प्रेरणास्रोत श्री अजय सहगल जी, हिमाचल को बधाई दी। उन्होंने कहा कि आजादी के लिए कुर्बानी देने वाले असली चेहरों को इतिहास में भुला दिया गया। देश की युवा पीढ़ी का ऐसे शहीदों की जानकारी देने के लिए आज का यह कार्यक्रम अत्यन्त प्रेरणादायक और महत्वपूर्ण है। इस अवसर पर सरदार किरणजीत सिंह जी द्वारा सरदार अजीत सिंह के संबंध में लिखित ऐतिहासिक लेख को समेटे पुस्तिका धरोहर का भी विमोचन किया गया। इस पुस्तक का संकलन श्री अजय सहगल जी (हिमाचल) द्वारा किया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित सांसद श्री मनोज तिवारी ने देशभक्ति भरे गीत सुनाकर सबको भाव विभोर कर दिया। उपहार स्वरूप हर सम्मानित परिवार को सत्यार्थ प्रकाश की एक एक प्रति भी भेंट की गई।

You Change Your Life by Changing Your Heart...

टंकारा समाचार   नवम्बर 2023

Delhi Postal R.No. DL (ND)-11/6037/2021-22-23

अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसेंस नं० U(C) 231/2023

Posted at LPC Delhi RMS, Delhi-06 on 1/2-11-2023

R.N.I. No 68339/98   प्रकाशन तिथि: 23.10.2023

मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक–अजय सहगल द्वारा मयंक प्रिंटर्स, 2199/63, नाईवाला, करोल बाग, नई दिल्ली–5 दूरभाष : 41548503 से छपवाकर कार्यालय महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा, आर्य समाज (अनारकली), मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–1 दूरभाष : 23360059, 23362110 से प्रकाशित। संपादक : अजय